महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६१ अंक : ०६

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: फाल्गुन शुक्ल २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-३०० रु.

पाँच वर्ष-१२०० रु.

आजीवन -३००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

मार्च द्वितीय २०१९

अनुक्रम

०१. स्वराज्य और स्वदेशीयता के...	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-२५	डॉ. धर्मवीर	०९
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१२
०४. उपासना एवं फल के विषय में	उदयवीर शास्त्री	१७
०५. स्वामी दयानन्द के आने की ज़रूरत	पीर मुहम्मद मूनिस	२१
०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२४
०७. शङ्का समाधान- ४४	डॉ. वेदपाल	२६
०८. शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द...	सूर्यादेवी चतुर्वेदा	२८
०९. यज्ञ एवं प्रदूषण-समस्या	जगदेव विद्यालङ्कार	३२
१०. आर्य मान्यताओं के पुन: संस्थापक...	कृष्णचन्द्र गर्ग	३६
११. आर्यजगत् के समाचार		३८
१२. १३६ वर्ष बाद...	अंकित 'प्रभाकर'	४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

शिवरात्रि पर विशेष

स्वराज्य और स्वदेशीयता के प्रथम प्रेरक ऋषि दयानन्द और उनकी अंग्रेजी शासन को चुनौतियाँ

यों तो भारत देश महापुरुषों की जन्मस्थली और कर्मस्थली रहा है। इस देश में अनेक ऋषि-मुनि, योगी, विद्वान्, राष्ट्रनेता, समाजसुधारक और धर्मरक्षक हुए हैं। जब हम उनके जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो प्राय: सभी के जीवन में कुछ गुण दिखाई पड़ते हैं, किन्तु महर्षि दयानन्द ऐसे अप्रतिम व्यक्तित्व थे जिनमें अधिकांश महापुरुषों के गुणों का समग्रता से समावेश दिखाई पड़ता है। वे योगी भी थे, विद्वान् भी थे, वेदोद्धारक, राष्ट्रोद्धारक, समाजसुधारक, नारी-जातिरक्षक, दलितोद्धारक एवं संस्कृति-सभ्यता-धर्मरक्षक भी थे। चाहते तो सम्पूर्ण जीवन ईश्वरीय-साधना में आनन्दमग्न रहकर व्यतीत कर सकते थे किन्तु जन-कल्याण और राष्ट्र-उत्थान की कामना से उन्होंने सामाजिक सुधार के लिए अपना जीवन अर्पित किया। विचार का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं बचा जिसके विषय में अपने परिष्कृत विचारों से लोगों को क्रान्तिकारी नव्य चिन्तन न दिया हो। प्रत्येक क्षेत्र में पतन की ओर निरन्तर गिरते भारत को अपने मार्गदर्शन से इस प्रकार रोक दिया जिस प्रकार कभी ऋषि धौम्य के शिष्य आरुणि उद्दालक ने मेड़ के स्थान पर स्वयं लेटकर खेत के रिक्त होते जलसंचय को रोका था। देश की स्वतन्त्रता, संस्कृति, सभ्यता को स्रवित होते देख महर्षि के मन की मार्मिक अनुभूति हमारे द्वारा भी अनुभव करने योग्य है-

''**यह आर्यावर्त देश ऐसा देश है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है।...सृष्टि से लेके पाँच हजार वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देश में माण्डलिक अर्थात् छोटे-छोटे राजा रहते थे।...स्वायंभुव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा।...परन्तु ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत-युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी यह अपनी पूर्व दशा में नहीं आया।**'' (सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास ११)

ऋषि ''**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**'' के महान् और व्यापक लक्ष्य को सामने रखकर कार्यक्षेत्र में उतरे थे, फिर भी उनको स्वदेश और स्वसंस्कृति के उद्धार और उत्थान की चिन्ता अधिक थी। वे इस देश की अज्ञानता, अशिक्षा, पराधीनता, पिछड़ापन, पतन से व्यथित हो उठते थे और चाहते थे कि यह देश स्वाधीन होकर फिर से विश्वगुरु तथा धन और बल से सम्पन्न होकर शिरोमणि देश बने। किसी भी व्यक्ति के पत्र उसकी आन्तरिक अनुभूतियों को प्रकट करने वाले होते हैं। महर्षि के पत्रांशों को पढ़कर महर्षि की मानसिक दशा का ज्ञान होता है। वह शीघ्र-से-शीघ्र देश को स्वतन्त्र और उन्नत देखना चाहते थे। उनके मानस में ऐसे भारत की परिकल्पना थी जहाँ स्वराज्य, स्वतन्त्रता, स्वशिक्षा, स्वभाषा, स्वधर्म, स्वसंस्कृति-सभ्यता की स्थापना हो। सन् १८७४ के एक विज्ञापन में महर्षि की पीड़ा एवं चिन्ता द्रष्टव्य है-

''**आर्यावर्त्त देश पर मुझको बहुत पश्चात्ताप है, क्योंकि इस देश में प्रथम बहुत सुखों और विद्याओं की उन्नति थी...सो इस वक्त ऐसा बिगड़ा है कि इतना बिगाड़ किसी देश में देखने में नहीं आता।**'' (महर्षि दयानन्द के पत्र-विज्ञापन)

सन् १८७९ के एक विज्ञापन में महर्षि ने इस बात पर दु:ख प्रकट किया था कि '**जब प्रकृति के सब व्यवहार ज्यों-के-त्यों हैं तो हम आर्यों का हाल क्यों बिगड़ गया?**' देश की पतनावस्था और पराधीनता का मूल कारण आपस की फूट को घोषित करते हुए महर्षि समझ लेते हैं कि यह असाध्य रोग के समान है। तब वे सर्वाधीश परमात्मा से इस फूट रूपी राजरोग के निवारण की प्रार्थना करते हैं- ''**जब आपस में भाई-भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है।...परमेश्वर कृपा करे कि यह राजरोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाये**'' (समुल्लास

१०)। महर्षि का चिन्तन सही था। फूट का रोग नष्ट होकर जब देश में एकता स्थापित हुई तो विदेशी पंच इस देश से विदा हो गया और देश में स्वराज्य तथा स्वतन्त्रता की स्थापना हो गई। देश तो स्वतन्त्र हो गया, किन्तु खेद का विषय यह है कि उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज आज उसी राजरोग के संक्रमण से पीड़ित हो गया।

महर्षि के हृदय में स्वदेश-प्रेम की भावना इतने गहरे तक समाई हुई थी कि वे स्वदेश का उपकार करने में अद्भुत प्रसन्नता का अनुभव करते थे और उनका रोम-रोम पुलकित हो उठता था। जोधपुर-नरेश को लिखे एक पत्र में उनके स्वदेश-उपकार से उपजी प्रसन्नता का अनुमान कीजिए-

''मैं जैसा सत्यधर्म की उन्नति और स्वदेश का उपकार होने में प्रसन्न होता हूँ वैसा किसी अन्य बात पर नहीं, क्योंकि यही मनुष्य-जन्म, विद्वान्, राजा व धनाढ्य होने का फल है।'' अन्त:करण के अन्तस्तल से निकले ये शब्द जैसे राष्ट्रभक्ति के अथाह सागर से तरंगायित होकर निकले हों।

ये प्रेरणाएँ देश-धर्म, संस्कृति-सभ्यता के प्रति महर्षि की अन्तर्वेदना को व्यक्त करती हैं। देश की दशा को देखकर वे उद्विग्न हो जाते थे। उनके जीवन की एक घटना आती है। एक दिन स्वामी जी रात्रि को शयन के समय चिन्तित अवस्था में टहल रहे थे। सेवक ने अनुमान किया कि शायद स्वास्थ्य ठीक नहीं है। उसने चिन्ता का कारण पूछ ही लिया। महर्षि ने जो उत्तर दिया वह वास्तव में चिन्ताजनक था-

''जब मैं आर्य-जाति की सार्वत्रिक अधोगति और अवनति देखता हूँ तो मेरी वेदना का पार नहीं रहता। आज विदेशी ईसाई-प्रचारक हिन्दू समाज के दलित वर्ग की दरिद्रता, पराधीनता तथा दुर्दशा का लाभ उठाकर उन्हें धर्मभ्रष्ट करने पर तुले हुए हैं। आश्चर्य है कि संसार के इस सर्वाधिक प्राचीन धर्म के एक महत्त्वपूर्ण अंग की इस हीन दशा को देखकर भी धर्माचार्यों, मठाधीशों तथा महन्तों का ध्यान इस ओर नहीं आ रहा है। यदि हमारे धर्माचार्य इसी प्रकार की उपेक्षा धारण किये रहेंगे, तो इस धर्म का सर्वनाश अवश्यम्भावी है।'' (नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती, पृष्ठ ३८५) महर्षि ने अधोगति के मर्म को जान लिया था और उसके लिए उत्तरदायी लोगों को सावधान भी किया, किन्तु पौराणिक धर्माधीशों के मस्तक पर आज तक भी चिन्ता की रेखा नहीं उभरी है। उनको आज तक भी अपने किये पर पश्चात्ताप और चेतना नहीं है। वे आज भी ऊँच-नीच और छूआछूत के व्यवहार को नहीं छोड़ रहे हैं। उसका लाभ अन्य धर्मों के लोग उठा रहे हैं? आर्य (हिन्दू) समुदाय दिन-प्रतिदिन संकुचित होता जा रहा है। सोचें इसका क्या परिणाम होगा?

स्वराज्य एवं स्वदेशीय भावना के सर्वप्रथम प्रेरक- सन् १८५७ में, आजादी की क्रान्ति असफल होने के बाद भारतीयों के प्रति अंग्रेजों के अत्याचार बहुत बढ़ गये थे, जिनसे प्रत्येक भारतीय भयभीत रहता था। महर्षि के कार्यकाल में अंग्रेजों का शासन चरम पर था और अंग्रेजी शासन की यातनाएँ भी चरम पर थीं। ऐसे समय पर ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में अंग्रेजी शासन की खुलकर निन्दा भी की और स्वराज्य की स्थापना की प्रेरणाएँ करते हुए विदेशी राज्य के बहिष्कार की घोषणाएँ भी कीं। महर्षि दयानन्द की इन प्रेरणाओं और घोषणाओं को सर्वप्रथम लिखित विद्रोह भी कहा जा सकता है।

सन् १८७६ में लिखी '**संस्कृत वाक्य प्रबोध**' नामक पुस्तक में महर्षि ने संवाद शैली में अंग्रेज-अफगान युद्ध की चर्चा की है। उसमें अंग्रेजों द्वारा किये आक्रमण को प्रत्यक्ष रूप में अनुचित मानते हुए अफगानियों के बचाव-युद्ध को उचित घोषित किया है तथा स्वराज्य की रक्षा के लिए किये जाने वाले युद्ध का परोक्ष रूप से समर्थन किया है। इसे भारत के लिए स्वराज्य-प्राप्ति हेतु युद्ध की प्रेरणा भी कहा जा सकता है। देखिए-

-''इस समय किस दिशा में कौन-कौन के साथ युद्ध होता है?

-पश्चिम दिशा में मुसलमानों के साथ हरिवर्षस्थ अर्थात् यूरोपियन लोगों का।

-हारे हुए मुसलमान लोग अब भी उपद्रव नहीं छोड़ते?

-वह तो पशु-पक्षियों का भी स्वभाव है कि जब कोई उनके घर आदि को छीन लेने की इच्छा करता

है, तब यथाशक्ति युद्ध करते और लड़ते ही हैं।'' (पृष्ठ ३४)

इसका अभिप्राय है कि राज्य और निवास छीनने वाले आक्रान्ताओं से युद्ध करना चाहिए। पाठक समझ सकते हैं कि अपने विरुद्ध की गई यह टिप्पणी अंग्रेजों को कितनी पीड़ादायक और चिन्तित करने वाली रही होगी।

कुछ वर्षों के बाद महर्षि और आगे बढ़े और उन्होंने विदेशी शासन को भारत में अवांछनीय घोषित करते हुए स्पष्ट शब्दों में भारतीयों को अपना चक्रवर्ती शासन स्थापित करने का आह्वान किया। '**आर्याभिविनय**' पुस्तक जो सन् १८७९ में प्रकाशित हुई थी, उसमें उन्होंने लिखा-

''अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी शासन न करें। हम कभी पराधीन न हों।'' (खण्ड २, मन्त्र ३१) अर्थात् सभी विदेशी शासक भारत को त्याग दें।

अंग्रेजी शासन और पराधीनता के विरुद्ध कितनी स्पष्ट घोषणा है!! आगे चलकर सन् १८८२-८४ में लिखित-प्रकाशित 'सत्यार्थप्रकाश' (द्वितीय संस्करण) तो मानो स्वराज्य प्राप्ति का घोषणा-पत्र (मेनिफेस्टो) ही बन गया, जिसको पढ़कर अनेक क्रान्तिकारियों, स्वतन्त्रता-सेनानियों, देशभक्तों और राजनेताओं ने प्रेरणा प्राप्त की। उसमें महर्षि ने अपना शासन स्थापित करने का उद्घोष करते हुए स्वदेशीय राज्य प्राप्ति के प्रयास करने हेतु प्रेरित किया है। महर्षि की अन्त:प्रेरक गम्भीर शब्दावली चिन्तन करने योग्य है-

''हम पूर्ण राजनीति को धारण करके माण्डलिक अथवा सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य करें।'' (समुल्लास ६) इसका भी निहितार्थ यह है कि भारतीयों को अपना राज्य येन-केन-प्रकारेण अपने अधीन कर लेना चाहिए।

महर्षि ने इस अगले कथन में स्वराज्य के महत्त्व और विदेशी राज्य के बहिष्कार की घोषणा कितनी निर्भयता के साथ की गई है, यह द्रष्टव्य है-

''कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा, मत-मतान्तर के आग्रहरहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।'' (समुल्लास ८)

उक्त घोषणाओं और प्रेरणाओं के सन्दर्भ में ही होमरूल आन्दोलन की प्रवर्तक श्रीमती एनी बेसेन्ट ने महर्षि दयानन्द के विषय में यह महत्त्वपूर्ण मन्तव्य दिया था-

''Dayanand was first to proclaim India for Indians.''

अर्थात्-'महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने यह घोषणा की थी कि भारत भारतीयों के लिए है। उन्हीं का यहाँ शासन करने का अधिकार है।'

इतिहास से हमें जानकारी मिलती है कि महर्षि से पूर्व लेखन या वक्तव्यों में स्वराज्य की चर्चा नहीं होती थी। सन् १९०६ में महर्षि के बाद ही दादाभाई नौरोजी ने '**स्वराज्य**' शब्द का प्रयोग किया था। सन् १९१६ में बाल गंगाधर तिलक ने महर्षि के ही कथनों को '**स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है**' के रूप में प्रस्तुत किया था। उसके बाद सन् १९२९ में कांग्रेस ने लाहौर अधिवेशन में स्वराज्य-प्राप्ति का प्रस्ताव स्वीकृत किया था।

ऋषि के उद्घोषों में जहाँ स्वदेशीय-राज्य की प्राप्ति की प्रेरणा है, उसके साथ विदेशी राज्य की हीनता का कथन भी रेखांकित करने योग्य है। तिलक की घोषणा में स्वराज्य के जन्मसिद्ध अधिकार का तो दावा है किन्तु विदेशी राज्य की निन्दा में एक भी शब्द नहीं है। महर्षि ने विदेशी-राज्य की निन्दा करके और विदेशी-राज्य को अस्वीकार करके एक लिखित विद्रोह का सूत्रपात कर दिया था। यही सूत्रपात आर्यों के मन में देशभक्ति के संस्कारों के निर्माण का कारण बना। यही कारण रहा कि आजादी के आन्दोलन में आर्यों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया और आर्यत्व से प्रभावित क्रान्तिकारियों ने अपना बलिदान दिया। ऋषि दयानन्द के अनुयायी आर्यों ने ऋषि के कथन को अपना कर्त्तव्य माना और देशभक्ति को अपना उद्देश्य बनाया। एक लोकप्रसिद्धि के अनुसार, स्वतन्त्रता-आन्दोलन में भाग लेने वाले भारतीयों में ८० प्रतिशत आर्यसमाज के जन थे। क्योंकि गुरुदेव महर्षि दयानन्द राष्ट्रभक्त थे, इसी कारण प्रत्येक 'आर्य' जन संस्कारों से स्वत:स्फूर्त राष्ट्रभक्त होता है। उनकी राष्ट्रभक्ति आन्दोलनों में भागीदारी से प्रकट भी होती रही है।

स्वदेशीय वस्तुओं के प्रयोग की प्रेरणा स्वराज्य और स्वतन्त्रता-भक्ति की उत्प्रेरक होती है। इसकी शुरुआत १८८२-८४ के मध्य महर्षि दयानन्द 'सत्यार्थप्रकाश' के माध्यम से कर चुके थे। अंग्रेजों की स्वदेशीय-भक्ति का उदाहरण देते हुए वे भारत के वासियों को भी जागृत करते हैं-

''देखो! अपने देश के बने हुए जूते को (यूरोपियन लोग) ऑफिस और कचहरी में जाने देते हैं, इस देशी जूते को नहीं। इतने ही में समझ लो कि अपने देश के बने जूतों की भी जितनी प्रतिष्ठा करते हैं, उतनी अन्य देशस्थ मनुष्यों की भी नहीं करते।'' (सत्यार्थप्रकाश, ११ समुल्लास) इस कथन में स्पष्ट प्रेरणा है कि स्वदेशीय वस्तुओं का प्रयोग करना चाहिए।

महर्षि ने, जहाँ कहीं थोड़ा-सा भी प्रसंग आया, वहाँ अंग्रेजों के पक्षधरों तथा अंग्रेजों की खुलकर आलोचना की है। ब्राह्मसमाज की अंग्रेज-प्रियता पर उन्हें फटकारते हुए महर्षि लिखते हैं- **''व्याख्यानों में ईसाई आदि अंग्रेजों की प्रशंसा पेटभर करते हैं। ब्रह्मा आदि महर्षियों का नाम भी नहीं लेते, प्रत्युत ऐसा कहते हैं जैसे कि बिना अंग्रेजों के, सृष्टि से आज पर्यन्त कोई भी विद्वान् नहीं हुआ।''** (समु. ११, सत्यार्थप्रकाश)

पुरानी पीढ़ी के साधारण व्यक्तियों से कभी-कभी हम अंग्रेजों के न्याय की प्रशंसा सुना करते हैं। हम इस तथ्य को भूल जाते हैं कि अंग्रेजों का न्याय भारतीय-भारतीय के बीच ही होता था, अंग्रेज और भारतीयों के बीच तो वे खुला पक्षपात किया करते थे। इतिहास में इस तथ्य को पुष्ट करने वाली अनेक घटनाएँ दर्ज हैं। महर्षि ने भी इस सत्य को साक्षात् देखा-जाना था। बड़ी निर्भीकता के साथ वे अंग्रेजों की न्याय-व्यवस्था पर प्रश्न उठाते हैं, और साथ ही उनके धर्मग्रन्थ पर भी-

''ईसाई लोग ईसाइयों का बहुत पक्षपात कर किसी गोरे ने काले को मार दिया हो तो भी बहुधा पक्षपात से निरपराधी कर छोड़ देते हैं। ऐसा ही ईसा के स्वर्ग का भी न्याय होगा।'' (सत्यार्थप्रकाश, १३ समु.)

व्यक्ति अपनी और अपनी समाज-व्यवस्था की आलोचना को सहन कर लेता है किन्तु उसके साथ-साथ अपने धर्म और धर्मग्रन्थ पर हुई आलोचना से अत्यन्त असहिष्णु हो उठता है। यह जानते-समझते हुए भी, और यह देखते हुए भी कि अंग्रेजों का शासन दमनपूर्ण है, महर्षि ने तेरहवें समुल्लास में न केवल उनके धर्मग्रन्थ 'बाइबिल' की तीक्ष्ण आलोचना की है, अपितु उसके साथ-साथ पैगम्बर, ईसामसीह की वृत्ति तथा अंग्रेजों की उपनिवेशवादी दुष्प्रवृत्ति पर भी प्रहार किया है। अंग्रेजों ने जिस देश पर शासन किया, उसको लूट-लूटकर अपने घर-देश को भरा है। महषि उस पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं-

''ईसाई लोग परदेशियों के माल पर ऐसे झुकते हैं कि जानो प्यासा जल पर, भूखा अन्न पर। जैसी यह केवल मतलब-सिन्धु और पक्षपात की बात है, ऐसा ही ईसाइयों का ईश्वर भी है।'' (स.प्र., १३ समु.)

महर्षि दयानन्द ने भारत की जनता के साथ की गई बर्बरता के इतिहास को पढ़ा भी था और अपने जीवनकाल में प्रत्यक्ष देखा भी था। फिर भी वे अंग्रेजों और उनके यातना एवं पक्षपातपूर्ण शासन की आलोचना करने में कभी भयभीत नहीं होते थे। सर्वस्वत्यागी, सत्यप्रेमी, वीतराग, मृत्युञ्जयी योगी को किससे भय हो सकता है, सिवाय ईश्वर के? इसलिए वे सदा अपनी बात सत्य और निर्भीकता के साथ कहते थे। बरेली के प्रवचनों में श्रोता के रूप में कमिश्नर एडवर्डस्, कलेक्टर मिस्टर रोड, पादरी स्कॉट सहित १०-२० अधिकारी आते थे। एक दिन महर्षि ने बाइबिल की लीलाओं की आलोचना की। उसको सुनकर कलेक्टर का मुख क्रोध से लाल हो गया। अंग्रेज अधिकारियों ने महर्षि की आलोचना का बहुत बुरा माना। उन्होंने आर्यसमाज के मन्त्री लाला लक्ष्मीनारायण खजांची को बुला कर रोष प्रकट किया और धमकी के स्वर में ऐसा न करने को कहा। मन्त्री जी ने संकोच भाव से यह सब महर्षि को सूचित किया। अगले दिन अंग्रेज अधिकारी (पादरी स्कॉट को छोड़कर) प्रवचन सुनने पहुँचे। महर्षि ने उनकी प्रतिक्रिया में निर्भीक होकर अपने भाषण में निर्भीकता से यह कहा-

''लोग कहते हैं कि सत्य को प्रकट न करो, कलेक्टर क्रोधित होगा, कमिश्नर अप्रसन्न होगा, गवर्नर

पीड़ा देगा। अरे, चक्रवर्ती राजा भी क्यों न अप्रसन्न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।'' (नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती, पृष्ठ ३६८)

जिनके राज्य में कभी सूर्यदेव भी अस्त नहीं होते थे, ऐसे प्रबल शासकों के सामने उक्त निडरता का उद्‌घोष करना साधारण व्यक्ति के वश की बात नहीं थी। महर्षि में अद्‌भुत आत्मबल था, परमात्मा पर अटूट विश्वास था, वैदिक धर्म, संस्कृति-सभ्यता और देशप्रेम की दीवानगी थी और पराधीनता तथा धर्मह्रास की व्याकुल कर देने वाली पीड़ा थी। लाहौर में नवाब रजाअली खाँ के बाग में निवास करते समय अपने प्रवचनों में भी महर्षि ने अपनी निडरता का वैसा ही उद्‌घोष किया था-

''मेरा प्रयोजन किसी मत या समुदाय की अनावश्यक निन्दा या स्तुति करना नहीं है और न मैं किसी से भयभीत होकर ही अपने कर्त्तव्य से विरत होता हूँ। वैदिक धर्म ही मेरा प्रतिपाद्य है और मेरी यह दृढ़ धारणा है कि यही सच्चा मानव धर्म है।...परमात्मा के अतिरिक्त मुझे किसी का भी भय नहीं है।'' (नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती, पृष्ठ ३१७)

स्वदेश की उन्नति के लिए व्यापारिक प्रेरणा

किसी भी देश की उन्नति उसकी आर्थिक सम्पन्नता पर निर्भर होती है और आर्थिक सम्पन्नता उसके मुक्त व्यापार पर निर्भर होती है। महर्षि ने देखा कि भारत के लोग न केवल पराधीनता का जीवन जी रहे हैं अपितु रूढ़िवादी सोच ने इनके मन-मस्तिष्क को इतना कुंठित कर दिया है कि देश के आर्थिक विकास को भी इन लोगों ने अपने रूढ़िवाद पर बलि चढ़ा दिया है। अंग्रेज लोग द्वीप-द्वीपान्तर से आकर इस देश में व्यापार करके समृद्ध हो रहे थे और इस देश के लोग समुद्रपार-गमन को भी पाप मान बैठे थे। इस देश का दुर्भाग्य रहा है कि इसके रूढ़िवादी धर्माचार्यों ने इसका न जाने कितनी तरह से अध:पतन किया है! महर्षि ने व्यापारिक रूढ़िवाद को छोड़ने की प्रेरणा दी और सावधान किया कि यदि विदेशी भारत में आकर व्यापार करते रहे और भारत के लोग केवल अपने देश में व्यापार करने तक सीमित रहे तो उसका दुष्परिणाम दु:ख और गरीबी के रूप में निकलेगा। महर्षि लिखते हैं-

''**क्या देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में राज्य वा व्यापार किये बिना स्वदेश-उन्नति कभी हो सकती है? जब स्वदेश में ही स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश (=हमारे देश) में व्यवहार वा राज्य करें तो सिवाय दारिद्र्य और दु:ख के दूसरा कुछ भी नहीं हो सकता।''** (सत्यार्थप्रकाश, समु. १०)

पराधीनता और रूढ़िवाद के उस अन्धकारमय युग में महर्षि का यह कथन राष्ट्रप्रेम का द्योतक है और आर्थिक क्रान्ति का प्रेरक है। स्वातन्त्र्य के क्षेत्र में महर्षि का योगदान बहुमुखी है। आवश्यकता उसके उचित मूल्यांकन की है। यह दायित्व उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और उनके अनुयायी आर्यों का मुख्यत: है; क्योंकि अनुयायियों की सक्रियता ही किसी व्यक्ति को विख्यात करती है और उनकी निष्क्रियता उसको गौण बना देती है।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

६- ईश्वर का स्वरूप-उसकी उपासना

न्याय और दया का भेद

जिसने जैसा जितना बुरा कर्म किया हो उसको उतना वैसा ही दण्ड देना, यह न्याय है। दण्ड देने का यह प्रयोजन है कि मनुष्य अपराध करने से बद्ध होकर दु:खों को प्राप्त न हो (अर्थात् बुरे कर्म करने में प्रवृत्त न हो)। दया का भी प्रयोजन है कि पराये दु:खों को छुड़ाना। यदि अपराधी को दण्ड न दिया जाए तो दया का नाश हो जाय क्योंकि एक अपराधी को छोड़ देने से सहस्त्रों धर्मात्मा पुरुषों को दु:ख देना होगा और उस अपराधी की अपराध करने की प्रवृत्ति नष्ट न होकर उसे भी दु:ख भोगना होगा। अत: उस अपराधी को दण्ड देकर ही उसे पाप से बचाना उस पर दया प्रकाशित करना है।

मृत्यु सूक्त-२५

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। सम्पादक

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।।

हम इस वेद-ज्ञान की चर्चा में ऋग्वेद के दशम मंडल के १८ वें सूक्त पर चर्चा कर रहे हैं। यह मृत्यु सूक्त कहलाता है। इसके दूसरे मन्त्र पर हम बात कर रहे हैं। इसका देवता-मृत्यु, ऋषि यामायनः, छन्द त्रिष्टुप् है। **मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः**- अर्थात् हम मृत्यु के कारणों को अपने रास्ते से हटाते हुए, आयु को विस्तार देते हुए, प्रतरम् श्रेष्ठ बनाते हुए, क्या प्राप्त करें। मन्त्र कहता है **प्रजया धनेन**- संतति और साधन। यह कैसे होगा? उसका एक शब्द में उपाय है- **शुद्धाः पूता भवत।** तुम यदि मन, वचन, कर्म, शरीर से पवित्र बनोगे, शुद्ध बनोगे तो तुमको यह सब प्राप्त होना कठिन नहीं है। तुम स्वयं अच्छे बनोगे तो दूसरों को अच्छा बना सकोगे। दो बातें यहाँ कहीं हैं-**शुद्धाः पूता भवत**। तुम कलुषित रह करके, मलिन रह करके, पापी होकर के ऐश्वर्य संपन्न नहीं हो पाओगे। वह तुम्हारा ऐश्वर्य, ऐश्वर्य की कोटि में ही नहीं आएगा। तुम्हारी प्रजाओं में श्रेष्ठता लाने वाला भी नहीं होगा। तुम्हारी प्रजाओं में श्रेष्ठता हो, संस्कार हो और तुम्हारे साधनों में सात्विकता का समावेश कैसे होगा? कहता है, **शुद्धाः पूता भवत**। मन्त्र में पवित्रता की बहुत चर्चा है।

हमारे मन्त्रों को पवित्र करने वाला कहा है- **मन्त्राः पवित्रम् उच्यते।** इसलिए किसी भी अवसर पर हम मन्त्र पढ़ते हैं, जल छिड़कते हैं। उस जल के छिड़कने पर भी पवित्रता का भाव आता है। मन्त्र कह रहा है- **शुद्धाः पूता भवत**- शुद्ध, आप इसे बाह्य अर्थ में कह सकते हैं-शरीर की दृष्टि से, स्थान की दृष्टि से, वस्तु की दृष्टि से, धन की दृष्टि से। इनके अन्दर मलिनता न हो। मन की दृष्टि से, **पूता**। अर्थात् हमारा जो विचार है, वह भी अच्छा हो, पवित्र हो। जो सही विचार होता है, वह रक्षा करने वाला होता है, हमारा त्राण करने वाला होता है। यहाँ पर दो शब्दों का प्रयोग किया है। कहता है- **शुद्धाः भवत, पूता भवत**। बहुत ही रोचक शब्द है, मतलब हमारे यहाँ पवित्रता को कितना महत्त्व दिया जा सकता है, उसका यह उदाहरण है। हमारा जो बाह्य परिवेश है, उसके अन्दर भी शुद्धता होनी चाहिए, और जो हमारा आंतर है, हृदय है, वह भी **पूता**-पवित्र होना चाहिए। कैसे होगा? बाहर की चीजें तो स्नान से, मार्जन से, लेप से शुद्ध हो सकतीं हैं, आपने झाड़ू लगाई, साफ कर दिया, धो दिया, पोंछ दिया, झाड़ दिया, इससे तो आप शुद्धि कर लोगे। लेकिन इस अंतस को कैसे शुद्ध करोगे। दोनों का एक उपाय बताया इसी मन्त्र में। वो है- **यज्ञियासः**। **यज्ञियासः भवत**। तुम यज्ञ करने वाले बनो। तुम यदि यज्ञ करने वाले बनोगे तो तुम शुद्ध भी हो जाओगे, पवित्र भी हो जाओगे। यज्ञ में एक विशेषता है, वह हमारे अंतस को भी पवित्र करता है और हमारे बाह्य वातावरण को भी पवित्र करता है। जब कोई व्यक्ति यज्ञ करना चाहता है, यज्ञ करने की इच्छा करता है, तब वह अपने बाह्य परिवेश को पवित्र करता है, शुद्ध करता है- मार्जन से, लेपन से, प्रक्षालन से, वह धो, पोंछ-झाड़कर जगह को सुन्दर बनाता है, हवनकुण्ड को सजाकर रखता है, सामग्री, समिधाओं को व्यवस्थित रूप में लाता है और उससे जब यज्ञ करता है, तो मन्त्र पढ़ता है। मन्त्र क्या करते हैं, मेरे हृदय के भावों को पवित्रता प्रदान करते हैं। मैं कहता हूँ- **इदं वायवे स्वाहा, इदं वायवे इदन्न मम**। मैं

प्रत्येक आहुति के साथ, अपनी प्रत्येक क्रिया के साथ पवित्रता का भाव जोड़ता हूँ, उसे श्रेष्ठता की ओर ले जाता हूँ। यज्ञ है ही श्रेष्ठता का नाम। बहुत प्रसिद्ध पंक्ति जिसको सब जानते हैं- **यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म** -संसार में जितने भी अच्छे-अच्छे काम हैं, हम उनको यज्ञ कहते हैं। पढ़ने-पढ़ाने को यज्ञ कहते हैं, कथा सुनाने-सुनने को यज्ञ कहते हैं, प्रवचन करने को यज्ञ कहते हैं, दान देने को यज्ञ कहते हैं। यज्ञ जो है वह हर श्रेष्ठ कार्य के लिए है। हर कार्य श्रेष्ठ तभी बन सकता है, जब उसमें यज्ञ की भावना हो। इसके लिए गीता की एक बड़ी सुन्दर पंक्ति है- **यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः। तदर्थम् कर्म कौन्तेय मुक्तसंगः समाचर**।। (गीता ३.९)- कहता है कि इस संसार में जो भी करोगे उससे बन्धन तो आएगा ही आएगा। किसी इच्छा से प्रेरित होकर करोगे, किसी आसक्ति में पड़कर करोगे, तो वो हर काम आपको बाँधने वाला होगा, आपको लपेटने वाला होगा, आपको बन्धन में डालने वाला होगा। लेकिन वह काम आपको बन्धन से मुक्त कराने वाला भी हो सकता है, कैसे हो सकता है? कहता है, आप उस काम को यज्ञ मान लो, उस काम को यज्ञ बना डालो, उसको यज्ञ की भावना से करो। **यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र।** जब मनुष्य कोई भी कर्म यज्ञ की भावना से हटकर करेगा, यज्ञ की भावना को बिना रखे करेगा, तो उसका वह कर्म उसके बन्धन का कारण बनेगा, आसक्ति का कारण बनेगा, मोह का कारण बनेगा, लेकिन जब यज्ञ की भावना से करेगा तो कर्त्तव्य की भावना से करेगा, परमेश्वर के निर्देश के पालन करने की भावना से करेगा, परमेश्वर को प्रसन्न करने की भावना से करेगा, सबके लोकोपकार की भावना से करेगा, परोपकार की भावना से करेगा। क्योंकि यज्ञ परोपकार का एक उदाहरण है, दृष्टान्त है। यज्ञ में जो कुछ आप कर रहे हैं, सब कुछ परोपकार के लिए होता है। आप जो प्रवचन करते हैं, आप जो मन्त्र पढ़ते हैं, आप जो आहुति देते हैं, आप जो घी डालते हैं, आप जो सामग्री डालते हैं, आप जो भी कर रहे हैं, यज्ञ को निमित्त मानकर वह आपके लिए परोपकार का कारण है, वह सबके लिए लाभदायक होने जा रहा है, सबका भला करने वाला है। इसलिए जहाँ कहीं परोपकार का भाव होता है, हम उन कार्यों को भी यज्ञ कह देते हैं। **यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः...।** इसलिए वहाँ श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा-भले आदमी जो तू कर रहा है, इसके साथ अपने को क्यों जोड़ता है? इसको कर्त्तव्य बना, इसको यज्ञ बना, इसको उपकार के लिए किया जाने वाला कर्म बना, तब इसके बन्धन में नहीं पड़ेगा, इसके फलों के चक्कर में नहीं पड़ेगा। यहाँ पर भी यही कहा है कि हम शुद्ध और पवित्र होना चाहते हैं, तो इस संसार में शुद्धता और पवित्रता के लिए और कोई उपाय नहीं है। कहता है **यज्ञियासः भवत।** तुम यज्ञ करने वाले बनो। तुम सदा यज्ञ करने की बात करो, तुम सदा अपने कामों को ही यज्ञ बना डालो, यज्ञ को अपना सबसे बड़ा काम समझो और जितना-जितना यज्ञ करोगे, तो उतने-उतने **शुद्धाः पूता** उतनी-उतनी अधिक शुद्धता और पवित्रता आपमें आएगी। यह अद्‌भुत बात है। इससे वातावरण भी दोषरहित हो रहा है, शुद्ध हो रहा है। जब हम यज्ञ करते तो वातावरण अपने आप दोष से मुक्त हो जाता है, शुद्धता से परिपूर्ण हो जाता है। मनुष्य के मन में जिस समय यज्ञ करने की बात आती है, वह सतोगुण के बिना नहीं आती, क्योंकि यज्ञ करना एक तरह से देने की बात है, दान करने की बात है, परोपकार करने की बात है, ईश्वर की सेवा करने की बात है, सज्जनों का सत्संग करने की बात है, खर्च करने की बात है।

यज्ञ का भाव मन में आना, हमारी पवित्रता का लक्षण है। हम जब यज्ञ के भाव को ही मन में लाते हैं तो उससे की जाने वाली क्रिया स्वाभाविक रूप से पवित्रता का कारण बनती है। हमारा यज्ञ जो हमने किया है, कर रहे हैं, वो हमारे वातावरण को भी पवित्र कर रहा है और हमारे मनों को भी पवित्र करता है, मनुष्य के मन में जब श्रेष्ठ विचार होते हैं तो श्रेष्ठ कार्य करता है और जब वह श्रेष्ठ कार्य कर रहा होता है, तब उसके मन में भी श्रेष्ठ विचार ही होते हैं। इस श्रेष्ठता के विचार के कारण ही यज्ञ संपन्न हो पाता है। इस यज्ञ को सम्पन्न होने के लिए हमारे अन्दर सात्विक भाव का होना नितान्त आवश्यक है। यदि हमारे अन्दर सात्विक भाव नहीं है तो यह यज्ञ भी हमारा उपकार नहीं कर सकता, हमारा भला नहीं कर सकता, यह भी तमस कोटि में चला जाएगा, रजस कोटि में चला जाएगा।

इसलिए हमको पवित्र बनने के लिए, वेद कहता है- **यज्ञियासः भवत**, तुम यज्ञ करने वाले बनो। यज्ञ करने वाले बनोगे तो तुम्हारे अन्दर पवित्रता आएगी और तुम्हारे अन्दर पवित्रता आएगी तो तुम्हारी जो वृद्धि है, **प्रजया धनेन**- इसमें एक संबन्ध ढूँढने की बात है। यदि ये चीजें आपस में जुड़ी न हों तो इनके कहने का कोई अर्थ नहीं है। मतलब, एक यज्ञ करने वाला, यज्ञीय भावना वाला व्यक्ति जो है, उसको अच्छी संतान मिलती है। यह दूसरी बात, क्योंकि तीनों बातों को एक ही पंक्ति में वेद कह रहा है। **आप्यामानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।** यदि इनका आपस में कोई संबन्ध न हो, तो इनको एक पंक्ति में कहने से कोई लाभ नहीं है। कहता है, मेरी आयु अच्छी हो यह मैंने पहली पंक्ति में कहा है, मेरी आयु लंबी हो अर्थात् मेरे इस यज्ञ कर्म के करने से मेरी आयु लंबी भी होगी और मेरी आयु अच्छी भी होगी, आनन्द और सुख देने वाली होगी। क्योंकि सुख मेरी पवित्रता से आता है, मेरी शुद्धता, निर्मलता से आता है और मेरे पास जो समृद्धि है वो शुद्धता और पवित्रता के साथ प्राप्त होने वाली है।

प्रजया धनेन। इन तीनों चीजों को जब हम मिलाकर देखें तो पूरा मन्त्र बहुत स्पष्ट होता है कि यह जो दुःख है, मृत्यु है इसको मैं दूर करूँ और अपनी आयु को लम्बा और सार्थक बनाऊँ तो मुझे दूसरी पंक्ति पर ध्यान देना होगा, **आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः** यह मूल चीज है। इसको क्रम जो देना होगा, वह कैसा होगा? **यज्ञियासः भवत, शुद्धाः पूता भवत, प्रजया धनेन आप्यायमानाः भवत।** अर्थात् जब आप यज्ञ करेंगे, आपका जीवन यज्ञमय होगा, उस यज्ञ की पवित्रता से, श्रेष्ठता से आपका हृदय भी निर्मल होगा, आपका स्थान भी, आपका शरीर भी और आपकी इस शुद्धता और पवित्रता के साथ-साथ **आप्यायमानाः प्रजया धनेन**, आपका परिवार प्रजाओं से, संतति से, प्राणियों से, चेतन से और संपत्ति से, साधनों से उपयोगी वस्तुओं से **आप्यायमानाः** बढ़ने वाला होगा।

यह मन्त्र बहुत सरल और बड़ा सहज कह रहा है कि यदि मैं अपने जीवन को दीर्घ आयु वाला बनाना चाहता हूँ, यदि मैं अपने जीवन को श्रेष्ठ आयु वाला बनाना चाहता हूँ, यदि अपने जीवन को मैं सफल करना चाहता हूँ, घर को समृद्धियुक्त देखना चाहता हूँ, अपनी सन्तान में सुधार और संस्कार देखना चाहता हूँ तो मुझे अपने जीवन में यज्ञ को अपनाना पड़ेगा और जब मैं यज्ञीय हो जाऊँगा, यज्ञियासः हो जाऊँगा, तब शुद्ध हो जाऊँगा, पवित्र हो जाऊँगा और प्रजाओं और धन से परिपूर्ण हो जाऊँगा।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रातः ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

कुछ तड़प–कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

माई भगवती– माई भगवती अल्पशिक्षित तो थी, परन्तु अपनी लगन, श्रद्धा व तप–त्याग से इतिहास की धारा बदलने में उसने अच्छा योगदान दिया। उन्नीसवीं शताब्दी में विशेष रूपसे पंजाब के इतिहास में महर्षि दयानन्द की स्मृति में डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना के लिये एक सभा का आयोजन किया गया। तरुण हंसराज ने उस स्कूल के लिये अवैतनिक कार्य करने की घोषणा करके समाज में उत्साह व जोश भर दिया। वह स्कूल–स्कूल न रहकर के एक विराट् रूप धारण करके देशभर में फैल गया। इस कारण उन्नीसवीं शताब्दी की वह सभा एक ऐतिहासिक महत्त्व की घटना बन गई। उस सभा में एक महिला का भी हृदयस्पर्शी स्मरणीय भाषण हुआ। वह महिला माई भगवती थी। देश भर में तब कहीं भी किसी ऐतिहासिक सभा में किसी महिला का ऐसे भाषण नहीं हुआ था।

वह चन्दन सिंह कौन था?– जोधपुर के महर्षि स्मृति न्यास के मासिक पत्र में लन्दन में दिवंगत हुए चम्बा के चन्दन सिंह ब्राह्मण पर एक लेख छपा है। न्यास ने उसे याद किया, कुछ प्रेरणा दी यह अच्छा किया। चन्दन सिंह निर्धन सेवक था। चम्बा का राजा उसे अपने सेवा के लिये लन्दन ले गया था। वहाँ से महाराजा फ्राँस जर्मनी आदि देशों में कहीं भ्रमण हेतु गया तब चन्दनसिंह की रुग्ण होने पर हस्पताल में मौत हो गई। उसे लावारिस घोषित करके ईसाई रीति से दफनाने का निर्णय लिया गया। महर्षि दयानन्द के पत्र–व्यवहार में जिस लक्ष्मीनारायण की चर्चा है वह तब लन्दन में पढ़ता था। उसने आर्यसमाज की ओर से शव को प्राप्त करने के लिये कहा कि आर्यसमाज अपने देशबन्धु का वारिस है, शव हमें मिलना चाहिये। हम वेदोक्त रीति से इसे जलायेंगे। तब इंग्लैण्ड में शवदाह का कानून ही नहीं था। मुट्ठी भर आर्यों ने संघर्ष करके उसे प्राप्त कर लिया। यह उस युग में लन्दन का प्रथम शवदाह था। माता हरदेवी और पंजाब के आर्य नेता रोशनलाल लन्दन की सबसे पहली उस शोभा यात्रा (शव–यात्रा) में साथ थे।

लक्ष्मीनारायण जी साँपला जिला रोहतक के लाला रामनारायण के सुपुत्र दृढ़ आर्य, पक्के ऋषिभक्त, देशभक्त और पं. लेखराम जी का निडर योद्धा था। आप ऋषि के वेदभाष्य, पं. लेखराम जी लिखित ऋषि–जीवन के अग्रिम ग्राहक थे। ऋषि के पत्र–व्यवहार में इनके भी पत्र हैं। लक्ष्मीनारायण एक आदर्श स्वदेशी का पोषक कर्मठ आर्यवीर था।

पं. लेखराम जी के मौलिक तर्क– आर्यजगत् सोया पड़ा था। किसी को कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर के प्रकाशन की चिन्ता नहीं थी। श्री यशवन्त मेहता तथा लक्ष्मण जी जिज्ञासु ने अपनी हिम्मत से इसे प्रकाशित करने का सङ्कल्प कर लिया। श्री धर्मवीर जी का मार्गदर्शन माँगा तो उन्होंने इस ग्रन्थ रत्न को परोपकारिणी सभा से निकालने की योजना बना दी। पहला भाग छप चुका है। सभा द्वारा ग्रन्थ के आकर्षक प्रकाशन पर आर्य जनता का आशीर्वाद मिल रहा है। परोपकारी में पं. लेखराम के मौलिक तर्क हम क्रमश: दे रहे हैं।

पण्डित जी ने अपने ग्रन्थ में जो तर्क दिये सो दिये। हम देश के साहित्य और परकीय मतों पर पंडित जी के तर्कों की छाप भी खोज–खोज कर ला रहे हैं। कुल्लियात के फुटनोट्स में पूज्य पं. शान्तिप्रकाश जी ने तथा इन पंक्तियों के लेखक पं. लेखराम के पाण्डित्य को मुखरित करने के लिये जो टिप्पणियाँ दी हैं, उनका दूरगामी प्रभाव होगा।

पं. लेखराम जी का गुजरात (पंजाब) में एक मौलवी से शास्त्रार्थ हुआ। पण्डित जी ने कहा, इस्लाम में निर्बल जीवों का खाना हलाल है, परन्तु शक्तिशाली (यथा भेड़िया, सिंह) इनका मांस खाना हराम है। इस पर मौलाना ने कहा, ''पण्डित जी हमारे यहाँ तो चुहिया या चूहा भी हराम है। उससे निर्बल और क्या होगा?''

पण्डित जी ने पूछा, मौलाना आप क्या सुन्नी हैं या शिया? मौलाना ने कहा मैं शिया हूँ।

तब पण्डित जी ने कहा, यह चूहा ही तो था जिसने कर्बला युद्ध में जल की सब मुश्कें काट दीं और उस युद्ध

में कितने मोमिन प्यासे मर गये। यदि ऐसे चूहे और हो जायें तो कितने 'करबला' बन जायें। इस पर मौलवी निरुत्तर हो गया। पण्डित जी की समयसूचकता व सूझबूझ ऐसी थी कि प्रतिपक्षी निरुत्तर हो जाता था।

हत्यारा अल्लाह से क्या आदेश लेकर आया था?- पं. लेखराम जी मुलतान से लाहौर लौटे तो छः मार्च को उन्हें ऋषि-जीवन का लेखन-कार्य करते हुये क्रूर हत्यारे ने छल से छुरा मार दिया। हत्यारा फरवरी के मध्य महात्मा हंसराज जी के पास गया था और उन्हें शुद्ध करके पास रखने की प्रार्थना की और यह भी कहा, कॉलेज कमेटी मेरे रहने की व्यवस्था कर दे। महात्मा जी उसकी बातों में नहीं आये। बहुत समय पहले हमने एक पत्र में लिखा था कि हत्यारे के मन में क्या महात्मा हंसराज का वध करने की भी योजना (plan) था। मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने अपने इलहामी ग्रन्थों में महात्मा हंसराज जी से तथा कथित फरिश्ते के संवाद की चर्चा ही नहीं की। मिर्ज़ाई समय की सरकार की वफादारी (loyalty) की आजकल ट्रिब्यून में बहुत दुहाई दे रहे हैं।

१. वे हमारे इन प्रश्नों का उत्तर दें कि ज़िला गुरदासपुर को पाकिस्तान में मिलाने के लिये सन् १९४७ में खलीफ़ा ने सारी शक्ति लगा दी। वह अल्लाह की आज्ञा से किया था या उस समय की सरकार की आज्ञा से।

२. हत्यारा क्या महात्मा हंसराज जी की हत्या की योजना के उद्देश्य से उनके पास नहीं गया था?

३. लाला लाजपतराय वीर अजीत सिंह आदि क्रान्तिकारियों को किस सरकार की आज्ञा से नमकहराम मिर्ज़ा ने लिखा?

४. अंग्रेज़ों से सिखों के युद्ध में देशभक्त सैनिकों के लिये नबी ने लिखा वे नदी में डूब मरे। ऐसा किस सरकार की सेवा के लिये गोराशाही का गुणकीर्तन करने वाले पैग़म्बर ने लिखा? क्या ये भद्दे, कटु शब्द अल्लाह मियाँ ने लिखवाये अथवा अंग्रेज़ सरकार की धौंस से लिखने पड़े?

५. देश-विभाजन से पूर्व कादियाँ के समीप बूचड़खाना खुलवाने के लिये मिर्ज़ाई जमात ने सारी शक्ति लगा दी, ये किस सरकार के आदेश से करना पड़ा?

६. ''हिन्दू हमारे सैदे करीब हैं'' यह कादियानी नबी ने लिखा है। हिन्दुओं के शिकार के लिये प्रतिपल उत्सुक नबी और मिज़ाई जमात की इस दुर्नीति को सफल बनाने के लिये अब अल्लाह मियाँ का क्या फ़र्मान है?

डॉ. अलिफ़ नाज़िम की पुस्तकें मिल गईं- श्रीमान् दुर्गासहाय जी सुरूर की रचनाओं को खोजने व संग्रहित करने के लिये डॉ. अलिफ़ नाज़िम जी के अथक प्रयास की जितनी भी प्रशंसा की जाये सो थोड़ी है। 'सुरूर जहानाबादी समग्र' भाग एक व दो के नाम से यह शीघ्र प्रकाशित किया जायेगा। उर्दू साहित्य में देशभक्ति, शहीदों, अनाथों और विधवाओं के दुःख-दर्द का विषय लाने से पहले महाकवि को उसका समुचित स्थान दिलाने के लिये डॉ. अलिफ़ नाज़िम की सेवायें इतिहास में सदा अविस्मरणीय रहेंगी।

आर्यसमाज के लिये आगामी ऋषि मेला का विशेष महत्त्व होगा। स्वामी श्रद्धानन्द शौर्य शताब्दी वर्ष के साथ समग्र सुरूर के सुयोग्य सम्पादक डॉ. अलिफ़ नाज़िम की उपस्थिति से हम अभिमान से सिर ऊँचा करेंगे। महाशय जैमिनि सरशार सरीखे आर्यरत्न के काव्य करबला का भी विमोचन होगा और क्या-क्या लिखा जावेगा। यह आनन्ददायक बात है कि स्वामी श्रद्धानन्द शौर्य शताब्दी वर्ष मनाना हमारे लिये प्रत्येक दृष्टि से सार्थक होगा।

स्वराज्य आन्दोलन को पं. आत्माराम जी की देन- संसार में प्रत्येक क्रान्ति से पूर्व वैचारिक अथवा बौद्धिक जागृति का आन्दोलन होता है। वैचारिक क्रान्ति के बिना राजनीतिक क्रान्ति नहीं होती। इतिहासशास्त्री यही साक्षी देता है। इटली का एकीकरण और स्वतन्त्रता आन्दोलन हो अथवा फ्राँस, रूस की क्रान्ति या फिर भारत का स्वराज्य आन्दोलन हो। श्री पं. आत्माराम जी के जीवन व उपलब्धियों पर कार्य करते हुये हमने उनके जीवन के प्रत्येक पड़ाव तथा प्रत्येक पहलु पर गम्भीर चिन्तन किया।

देश के उन्नीसवीं शताब्दी के बड़े-बड़े व्यक्तियों को १८५७ की क्रान्ति के किसी योद्धा का नाम लेने की हिम्मत न हुई। सर सैयद अहमद हो या श्रद्धाराम फिल्लौरी अथवा काँग्रेस के नेता हों। किसके पत्रों, लेखों व ग्रन्थों में रानी झाँसी, राव तुलाराम या किसी क्रान्तिकारी का उल्लेख है? ऋषि का जीवन जो पं. लेखराम जी ने लिखा और आत्माराम

जी ने जिसका सम्पादन किया उसमें राव तुलाराम जी का नाम आता है। आत्माराम जी ने अद्‌भुत निडरता का परिचय देते हुये यह कार्य किया। जब देश के बड़े-बड़े नेता १८५७ की क्रान्ति को ग़दर (Mutiny) लिखते व कहते थे तब पं. लेखराम, पं. आत्माराम जी ने इसे बार-बार विप्लव लिख कर क्या नया इतिहास नहीं रचा? कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर का दूसरा भाग भी शीघ्र आने वाला है उसे ध्यान से पढ़िये। ऋषि-जीवन के कई प्रसंग तथा कई वाक्य दोहरा कर अंग्रेज के अत्याचारों को उजागर किया गया। क्या यह बौद्धिक जागरण नहीं था। आज तक दलितोद्धार की बात करने वाले किस लीडर के घर मेहतर कन्या की बरात आई? यह तो हमारा विद्वान् नेता आत्माराम था जिसने यह इतिहास बनाया। क्या यह बौद्धिक जागरण की महान् देन नहीं? ऋषि जीवन में पं. लेखराम के पगचिह्नों पर चलते जालन्धर नगर में ऋषि के एक व्याख्यान की चर्चा करते हुये १८५७ में अंग्रेज़ों की क्रूरता, भारतीयों की हत्या का दोषी बताया है। पं. लेखराम तो धर्म की वेदी पर बलिदान हो गये। अब तो अंग्रेज़ महात्मा मुंशीराम, मास्टर आत्माराम जी सम्पादक ऋषि जीवन को दबोच कर यातनायें दे सकते थे। ऋषि जीवन में आत्माराम जी ने १८५७ की क्रान्ति के रेवाड़ी के वीर योद्धा राव तुलाराम का नाम देकर एक और भयंकर अपराध कर दिया। न जाने मास्टर आत्माराम जी अंग्रेज़ का कोप भाजन बनने से कैसे बच गये। वह बच्चे तो थे नहीं। वे सब जानते थे कि यह घोर अपराध है।

ऋषि जीवन में ऐसा एक ही तो प्रसंग नहीं और भी ऐसे कई प्रसंग है। मास्टर जी ने सत्यार्थप्रकाश का भी कुछ अनुवाद किया। उर्दू में सत्यार्थप्रकाश उन्हीं की देखरेख में छपा था। श्री आत्माराम जी ने तेहरवें समुल्लास का अनुवाद किया। वहाँ भी विदेशियों की लूट-खसोट का खुला वर्णन है। ऋषि जीवन तथा सत्यार्थप्रकाश ने देशभक्तों के सीने गर्माये यह तो कोर्टों में भी कई अभियोगों में आया तो इस तथ्य को फिर कौन झुठलायेगा कि आत्माराम जी ने निडरतापूर्वक स्वराज्य संग्राम के लिये विचारक भूमि तैयार की। आर्यजन इसके महत्त्व को समझें।

सूर्यनगरी, अबोहर, पंजाब।

बोधरात्रि पर विशेष

स्वामी दयानन्द के प्रति

जगत् को जगमग किया श्रुतिज्ञान का दीपक जलाकर

पं. देवनारायण तिवारी 'निर्भीक'

रात आधी हो रही थी, मौन थीं सूनी दिशाएँ।
गाँव से कुछ दूर शिव की, हो रहीं थीं अर्चनाएँ।
एक छोटा सा शिवालय, भक्त उसमें सो रहे थे।
भूलकर शिव-अर्चना, गाढ़ी निशा में खो रहे थे।।
किन्तु बालक मूलशङ्कर, जग रहा कुछ बुदबुदाता।
''क्या यही है सत्य शिव, संसार जिसका व्रत मनाता!
यह पड़ा निस्तब्ध नीरव, मर चुकी है चेतना क्या?
कर रहे चूहे उपद्रव, ज्ञान इसको है नहीं क्या!''
अन्ततः निर्णय लिया यह, हो न सकता सत्य शङ्कर।
गढ़ दिया प्रतिमा अनूठी, कुछ जनों ने जोड़ पत्थर।।
शिवपुराण कथा सुनी जो, वह भ्रमित मन बुद्धि करती।
शक्ति इसमें कुछ नहीं है, कल्पना केवल निखरती।।
अतः उठ अब मूलशङ्कर, सत्य शिव की खोज कर ले।
चल कहीं गुरु देख अच्छा, ज्ञान उसका हृदय भर ले।।
उठ पड़ा वह त्याग मन्दिर, माँ-पिता को जा जगाया।
''माँ! न वह शङ्कर लगा, जिसका मुझे व्रत है कराया।।
जा रहा हूँ खोजने, शङ्कर कहाँ है, और क्या है।''
चल पड़ा घर त्याग झटपट, भटकता शङ्कर कहाँ है।
बहुत मठधारी मिले, पर ठग लगे उसको अनूठे।
देखकर आचरण सबका, हर किसी से भाव रूठे।।
किन्तु मथुरा में मिला गुरु, ज्योति को उसकी जगाया।
जल गया सब ज्ञान झूठा, सकल भ्रम उसने भगाया।।
अब खिला अङ्गार होकर, वेद का शुचि ज्ञान पाकर।
हर लिया जिसने तिमिर, नव ज्योर्तिमय ज्वाला जलाकर।।
चकित दुनियाँ देखती थी, आग यह कैसी निराली।
ढह रहे मत-पन्थ के गढ़, क्या अलौकिक शक्ति पा ली।।
यह कौन वज्राङ्ग कैसा! गरल पीकर भी न मरता।
जल रहा जग ज्ञान ज्वाला में, कौन-सा मन्त्र पढ़ता।।
थक गए सारे विरोधी, पर न इसका पग थका है।
विश्व को इसने झुकाया, पर न रञ्चक यह झुका है।।
श्रुति-मशाल लिया करों में, अग्नि काया में पचाकर।
जगत् को जगमग किया, दीपावली की लौ जलाकर।।
''अमर है इतिहास में ऋषि दयानन्द सरस्वती वह।''
धन्य वाणी कर रहा है, वचन यह 'निर्भीक' कह-कह।।

आर्यसमाज कलकत्ता।

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १६ से २३ जून २०१९

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे– समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा– खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

१०. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२४६०१६४) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक),

लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (०१४५-२६२१२७०) में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

email:psabhaa@gmail.com

संयोजक

एक आहुति अपने आचार्य के लिए........

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

मन्त्री

ऐतिहासिक कलम से....

उपासना एवं फल के विषय में

आचार्य उदयवीर शास्त्री

बड़ा गूढ़ है यह प्रश्न जिस पर कि इस लेख में विद्वान् लेखक की लेखनी चली है। उपासना का ठीक-ठीक स्वरूप समझाने के लिये आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान्, षड्दर्शनों के भाष्यकार आचार्य पं. उदयवीर शास्त्री ने आज से कई वर्ष पूर्व लेख लिखा था, जो 'वेदपथ' नामक पत्रिका में छपा था। इसकी उपयोगिता को देखते हुए परोपकारी के पाठकों की सेवा में यह लेख पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है। - सम्पादक

शिष्य-गुरुजी महाराज! आपने ब्रह्मज्ञान के उपायों के रूप में उपासना, ध्यान आदि के विषय में बताया, वह हम सबने समझने का प्रयत्न किया है और उसके अनुसार अनुष्ठान भी प्रारम्भ कर दिया है। यह बताने की और कृपा कीजिये कि क्या उपासना आदि के लिये स्थान विशेष का भी कोई नियम है? या जहाँ चाहे उपासना कर लेनी चाहिये?

गुरु-इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि आप सब अपने अन्य नियमित कार्यों के साथ अध्यात्ममार्ग की ओर अपनी अभिरुचि और प्रगति प्रकट कर रहे हैं। इस दिशा में उपासना तथा उसके सम्बन्ध की अन्य आवश्यक बातें आज आपके सन्मुख प्रस्तुत की जाती हैं, इन्हें समझें और इनसे लाभ उठायें।

उपासना के लिये किसी देश, दिशा एवं काल आदि के लिये शास्त्र कोई विशेष नियम नहीं बतलाता। उपासना का मुख्य उद्देश्य चित्त की एकाग्रता के लिए प्रयास करना है, इसके लिये जो देश-काल आदि उपयुक्त हों, वहाँ उपासना करनी चाहिये। यद्यपि श्वेताश्वतर उपनिषद् (२। १०) में योग व उपासना के लिये विशिष्ट स्थान का निर्देश है। वहाँ बताया-जो सम है, ऊबड़-खाबड़ नहीं है, शुद्ध है, कंकड़, बालू, अग्नि से रहित है, शब्द, जल तथा निवास आदि से मन के अनुकूल सुरम्य एकान्त प्रदेश है, वह उपासना आदि के अनुकूल होता है। तथापि उपनिषद् के निर्देश का तात्पर्य चित्त की एकाग्रता के लिये उपयोगी देश बताने में है। मुख्य लक्ष्य चित्त की एकाग्रता है, उसके लिये जहाँ अनुकूलता हो, वही स्थान उपासना आदि के लिये उपयुक्त होता है। इसलिये उपनिषद् के उस सन्दर्भ में **'मनोऽनुकूले'** पद स्पष्ट कहे हैं।

शिष्य-न केवल उपनिषद् में प्रत्युत स्थान विशेष के संकेत उपासना के लिये वेद में भी उपलब्ध होते हैं। वहाँ क्या अभिप्राय समझना चाहिये?

गुरु-यह ठीक है, वेद में इसके संकेत उपलब्ध होते हैं। यजुर्वेद (२६।१५) में मन्त्र है-

'उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत'

पर्वतीय एकान्त प्रदेश तथा नदियों के संगम स्थलों पर मेधावी उपासक शुद्ध अन्तःकरण से परब्रह्म की उपासना के लिये निवास करता है। एकान्त प्रदेशों के ये प्राकृतिक दिव्य दृश्य ब्रह्म-चिन्तन में एकाग्रता के लिये सहायक होते हैं। इसी भावना से सांख्यदर्शन में कहा है-

'न स्थाननियमश्चित्तप्रसादात्' (६।३१)

उपासना निदिध्यासन व समाधि-लाभ के लिये स्थान का कोई नियम नहीं है। उसका मुख्य लक्ष्य चित्त का प्रसाद अर्थात् चित्त की एकाग्रता करना है, उसके लिये जहाँ अनुकूलता हो, वही उपासना का उपयुक्त स्थान है।

शिष्य-देश की तरह क्या काल का भी कोई नियम नहीं है? उपासना आदि का अनुष्ठान कितने दिन, महीने या वर्ष तक करना चाहिये? लोक में प्रायः सब कार्यों के लिये काल नियत होता है, इतना कर लेने पर अमुक स्तर अथवा फल प्राप्त होता है। क्या उपासना आदि में ऐसा ही समझना चाहिये?

गुरु-ब्रह्म की उपासना ब्रह्मज्ञान के लिये की जाती है। जब तक ब्रह्म का साक्षात्कार न हो जाय, तब तक निरन्तर उपासना करते रहना चाहिये। इस अनुष्ठान के लिये दैनिक समय अपने आश्रम के अनुसार दिया जाना चाहिये। ब्रह्मचर्य आश्रम में अध्ययन और अन्य दैनिक आवश्यकचर्या को सम्पन्न करते हुए उपयुक्त समय दिया

जा सकता है। केवल उपासना के लिये दो घण्टा समय हो तो ठीक है। इस आश्रम में कुछ न्यून समय भी इस कार्य के लिये दिया जाय तो अनुचित नहीं है, क्योंकि ब्रह्मचर्य आश्रम का अन्य समस्त कार्यक्रम इस दिशा में परिपुष्टि के लिये ही होता है। गृहस्थ आश्रम के लिये ऋषि दयानन्द ने साधारण रूप से सायं-प्रात: एक-एक घण्टा उपासना में संलग्न रहने को लिखा है। कम-से-कम इतना होना चाहिये, अधिक समय हो सके तो और अच्छा। वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमी का अधिक समय इसी अनुष्ठान के लिये होता है। इस प्रकार उपासना के लिये दिन, महीने या वर्ष नियम नहीं है कि इतने काल उपासना करे, फिर छोड़ दे। यह तो ब्रह्म-साक्षात्कार होने तक की जानी चाहिये, चाहे समस्त जीवन इसमें लग जाय। फिर एक जीवन क्या, उस स्थिति को प्राप्त करने के लिये अनेक जीवन भी लग सकते हैं। इसी भावना को अभिव्यक्त करने के लिये प्रश्न उपनिषद् (५।१) में कहा-

स यो ह वै तद्भगवन् मनुष्येषु प्रायणान्तमोङ्कारमभिध्यायीत

हे भगवन्! वह जो मनुष्यों में मरणपर्यन्त ओङ्कार का ध्यान करता है। यहाँ मरण-पर्यन्त ध्यान एवं उपासना करने का तात्पर्य है-जब तक ब्रह्मज्ञान नहीं होता, तब तक उपासना करना। उपासना का प्रयोजन तभी पूरा होता है, इसलिये ब्रह्मज्ञान होने तक श्रद्धा एवं सत्कारपूर्वक निरन्तर उपासना करते रहना अपेक्षित है, इसमें काल का कोई नियम नहीं।

शिष्य-ब्रह्मज्ञान हो जाने पर आत्मा की क्या स्थिति होती है? यह विषय यदि ठीक स्पष्ट हो जाय, तो संसारी मानव इस मार्ग पर प्रगति के लिये किस प्रकार आकृष्ट हो सकता है-कृपया उस समय की स्थिति पर प्रकाश डालने का अनुग्रह करें।

गुरु-निरन्तर निदिध्यासन और उपासना आदि के अभ्यास से ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाने पर आत्मा का अगले पापों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता। तात्पर्य है, ब्रह्मज्ञान से जीवन्मुक्त अवस्था में ब्रह्मज्ञानी द्वारा कोई पाप किये जाने की सम्भावना नहीं रहती, फिर उससे सम्बन्ध कैसा? पिछले किये पाप ज्ञानाग्नि से दग्ध हो जाते हैं। छान्दोग्य उपनिषद् (४।१४।३) में बताया है-

'यथा पुष्करपलाश आपो न श्लिष्यन्त एवमेवं विदि पापं कर्म न श्लिष्यते'

जैसे कमल के पत्ते पर जल नहीं लगता, ऐसे ब्रह्मज्ञानी को पाप-कर्म छू नहीं पाता। यहाँ स्पष्ट किया है, ज्ञान हो जाने पर आगे पाप-कर्म का सम्बन्ध ज्ञानी को नहीं होता। ऐसा ही बृहदारण्यक (४।४।२३) में कहा-ब्रह्म के पद को जानना चाहिये, उसे जानकर पाप-कर्म के साथ सम्बन्ध नहीं होता।

पिछले पाप के विनाश के विषय में छान्दोग्य (५।२४।३) का कथन है-

तद्यथेषीकातूलमग्नौ प्रदूयेतैवं हास्य सर्वे पाप्मानः प्रदूयन्ते

जैसे सींक के ऊपर का रुई समान फूल आग में डालते ही जल जाता है, ऐसे इस ब्रह्मज्ञानी के सब पाप नष्ट हो जाते हैं। मनुस्मृति (११।२४६) में बताया-

यथैधस्तेजसा वह्निः प्राप्तं निर्दहति क्षणात्।
तथा ज्ञानाग्निना पापं सर्वं दहति वेदवित्।।

जैसे अग्नि अपने तेज से प्राप्त हुए ईंधन को क्षण में जला देता है, ऐसे वेदज्ञ ब्रह्मज्ञानी उपासक ज्ञानाग्नि से सब पापों को जला डालता है। श्लोक में 'वेदवित्' के स्थान पर किन्हीं प्रतियों में 'ब्रह्मवित्' पाठ स्पष्ट उपलब्ध होता है। फलत: यह निश्चित है कि ब्रह्मज्ञान से अगले पाप के साथ असम्बन्ध और पिछले पापों का नाश हो जाता है। इसके अनन्तर ज्ञानी आत्मा यथावसर मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

शिष्य-ब्रह्मज्ञानी के आगे पाप के असम्बन्ध और पिछले पाप के विनाश के विषय में आपने उपदेश किया। क्या ब्रह्मज्ञानी के पुण्य की भी यही गति होती है? कृपया इस विषय में भी उपदेश कर अनुगृहीत करें। शास्त्र इस विषय में क्या कहता है?

गुरु-पाप-पुण्य कर्म सांसारिक दु:ख-सुख के जनक होते हैं। ब्रह्मज्ञान हो जाने पर उपासक आत्मा मोक्ष प्राप्त कर लेता है। वहाँ सांसारिक सुख-दु:ख पाने का कोई अवसर नहीं रहता। शास्त्रकारों ने इसलिये पाप-पुण्य दोनों का असम्बन्ध ब्रह्मज्ञानी से बताया है। बृहदारण्यक उपनिषद् (४।४।२२) में कहा-**'उभे उ हैवैष एते तरति'** यह ब्रह्मज्ञानी इन दोनों (पाप-पुण्य) को तर जाता है। कृत-अकृत किसी तरह के पाप-पुण्य का सम्बन्ध ब्रह्मज्ञानी से

नहीं रहता, मुण्डक उपनिषद् (२।२।८) में कहा-

'क्षीयन्ते चास्य कर्माणि, तस्मिन् दृष्टे परावरे'

उस सर्वान्तर्यामी परब्रह्म का साक्षात्कार हो जाने पर इस उपासक के समस्त कर्म क्षीण हो जाते हैं। मुण्डक में अन्यत्र (३।१।१) कहा-

तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति

तब ब्रह्मज्ञानी पुण्य-पाप दोनों का उच्छेद कर निर्बाध ब्रह्म की समता को प्राप्त होता है, ब्रह्मानन्द को पा लेता है।

जिस देह में रहते उपासक को ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है, वह देह ज्ञान हो जाने पर उस समय तक बना रहता है, जब तक प्रारब्ध कर्मों का भोग द्वारा क्षय नहीं हो जाता। तात्पर्य यह कि ज्ञानाग्नि से प्रारब्ध कर्मों का क्षय नहीं होता, केवल संचित कर्मों का होता है। ज्ञान होने पर भी भोग के लिए प्रारब्ध पुण्य-पाप का सम्बन्ध ज्ञानी से बना रहता है। उस काल में अन्य किये गये कर्म दग्धबीज के समान फलोत्पादक नहीं होते। शरीर का पतन हो जाने पर अर्थात् प्रारब्ध भोग के अनन्तर देह छूट जाने पर आत्मज्ञानी से पाप-पुण्य का सम्बन्ध नहीं रहता। तब वह ब्रह्मानन्द का अनुभव करता है।

शिष्य-इस विषय को थोड़ा और स्पष्ट कर समझाने की कृपा करें। यह प्रारब्ध और संचित कर्म का विषय ठीक समझ में नहीं आया।

गुरु-कर्म तीन प्रकार के माने जाते हैं-प्रारब्ध, क्रियमाण, संचित। प्रारब्ध वे कर्म हैं, जिनको भोगने के लिये आत्मा कोई एक देह प्राप्त करता है और जिनका फल उस देह के जीवनकाल में भोग लेना है। क्रियमाण वे कर्म हैं, जो इस वर्त्तमान जीवनकाल में किये जाते हैं, उनमें कुछ ऐसे होते हैं, जो प्रारब्ध कर्मों के फल भोगने में सहयोगी हैं, उनका फल प्रारब्ध कर्मों के साथ भोग लिया जाता है। कुछ ऐसे होते हैं, जिनका फल उस जीवनकाल में नहीं भोगा जाना, वे संचित कर्मों की राशि में जा पड़ते हैं। संचित कर्म-पहले व वर्तमान जीवन में किये गये-वे हैं, जिनका फल वर्त्तमान जीवन में नहीं भोगा जाना। ऐसे पाप-पुण्य कर्म 'अनारब्धकार्य' कहलाते हैं, जिनको भोगे जाने का कार्य अभी प्रारम्भ नहीं हुआ। उसी जीवनकाल में ब्रह्मज्ञान हो जाने पर उस ज्ञानाग्नि से ऐसे सब संचित कर्मों का नाश अर्थात् दाह हो जाता है, प्रारब्ध का नहीं, क्योंकि ब्रह्मज्ञान संचित कर्मों की अवधि-सीमा है। जब तक ब्रह्मज्ञान न हो, संचित कर्म बने रहते हैं, ज्ञान होने पर उनका नाश हो जाता है। प्रारब्ध कर्मों का क्षय केवल भोग द्वारा होता है, उनको भोगने के लिये उस अवस्था में जो अन्य कर्म किये जाते हैं, वे केवल प्रारब्ध कर्मों के फल भोगवाने में सहायक होते हैं, स्वयं दग्धबीज के समान उनमें फलोत्पादन की क्षमता नहीं रहती। भोग द्वारा जब प्रारब्ध कर्मों का क्षय हो देह छूट जाता है, तब आत्मा मोक्ष पा जाता है। इसी अर्थ को छान्दोग्य उपनिषद् (६।१४।१) में कहा-

'तस्य तावदेव चिरं यावन्नविमोक्षेऽथ संपत्स्ये'

उस ब्रह्मज्ञानी को मोक्ष पाने में इतना ही विलम्ब रहता है, जब तक वह देह से छूट जाता, उसके अनन्तर मोक्ष पा लेता है।

शिष्य-यदि अनारब्ध कार्य अर्थात् सञ्चित पुण्य-पाप दोनों का ज्ञानाग्नि से नाश हो जाता है, तो अग्निहोत्र आदि शुभ आश्रम कर्मों को कौन करना चाहेगा? फिर इनका शास्त्र में विधान क्यों किया गया है?

गुरु-अग्निहोत्रादि आश्रम कर्मों का नाश ज्ञान से नहीं होता, क्योंकि ये कर्म ज्ञानोत्पत्ति के लिये किये जाते हैं। इन कर्मों के अनुष्ठान के साथ उपासना आदि द्वारा ज्ञान उत्पन्न हो गया, तो इन कर्मों का फल एक प्रकार से प्राप्त हो गया, तब ज्ञान द्वारा इनके नाश होने का प्रश्न ही नहीं उठता। न इन कर्मों और ज्ञान का परस्पर कोई विरोध है, क्योंकि अग्निहोत्रादि कर्म तो ज्ञान के प्रयोजक हैं। इस तथ्य को शास्त्र में स्पष्ट बताया है-

'तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन तपसाऽनाशकेन'

(बृ. ४।४।२२)

उस परब्रह्म परमात्मा को ब्राह्मण (ब्रह्म को जानने के उत्सुक व्यक्ति) वेदाध्ययन, यज्ञ, दान तथा अनाशक तप से जानना चाहते हैं। यहाँ अग्निहोत्र आदि निष्काम नित्यकर्मों को ज्ञान का साधन बताया गया है। इनका मुख्य फल अन्तःकरण की शुद्धि द्वारा ज्ञान के उत्पादन में सहायक होना है। स्वर्ग आदि फल काम्य कर्मों का माना जाता है।

इसलिये जब ब्रह्मज्ञान हो गया, तो इन कर्मों का फल मिल गया समझना चाहिये, ज्ञान से इनके नाश का अवसर ही नहीं आता।

शिष्य-यदि अग्निहोत्र आदि कर्मों का फल ज्ञान है, उससे इन कर्मों के नाश का अवसर नहीं, तो वे और कौन से पुण्य कर्म हैं, जिनका नाश ज्ञान से होता है?

गुरु-शास्त्रों में आश्रम-कर्म दो प्रकार के माने गये हैं- एक काम्य कर्म, जो विशेष फल की कामना से किये जाते हैं। दूसरे निष्काम कर्म नित्य अग्निहोत्र आदि अन्त:करण की शुद्धि द्वारा ज्ञान के साधन होते हैं, जैसा अभी प्रथम बताया गया। काम्य कर्मों के विषय में बृहदारण्यक उपनिषद् (६।२।१६) का वचन है-

'अथ ये यज्ञेन दानेन तपसा लोकान् जयन्ति'

और जो यज्ञ, दान, तप से लोकों को जीतते हैं। वाजपेय, राजसूय सोमयाग आदि कर्मानुष्ठान विशेष कामनाओं की प्राप्ति के लिये किये जाते हैं। पहले (बृ. ४।४।२२) सन्दर्भ में यज्ञ आदि निष्काम कर्म के लिए प्रयुक्त हुए हैं। दूसरे (बृ. ६।२।१६) में कामनायुक्त कर्मों के लिए। ऐसे काम्य कर्मों का यदि किसी उपासक को अभी फल नहीं मिला और उसे ब्रह्मज्ञान हो गया है, तो अन्य सञ्चित कर्मों की राशि में पड़े इन पुण्य कर्मों का ज्ञानाग्नि से अन्य सबके साथ दाह हो जाता है। ऐसे कर्मों के विषय में बृहदारण्यक उपनिषद् (४।४।२२) का वचन है- **'उभे उ हैवैष एते तरति'** यह ब्रह्मज्ञानी दोनों पाप-पुण्य को पार कर जाता है। ज्ञान हो जाने पर सञ्चित पाप-पुण्य फलोत्पादक नहीं रहते। मुण्डक उपनिषद् (३।१।३) में कहा-**'तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय'** तब ब्रह्मज्ञानी पुण्य-पाप दोनों का उच्छेद कर, इत्यादि वचनों में पापकर्म के साथ सकाम पुण्यकर्मों का नाश ज्ञान से बताया है। जहाँ अध्यात्मशास्त्रों में ज्ञान से पुण्य का नाश कहा है, वहाँ सर्वत्र काम्य-कर्मजनित पुण्य अभिप्रेत है, यह समझना चाहिये।

शिष्य-क्या केवल इन निष्काम कर्मों से ज्ञान हो जाता है, अथवा उपासना उसके लिये अपेक्षित है? तात्पर्य यह है-छान्दोग्य (१।१।१०) में कहा-

'यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा
तदेव वीर्यवत्तरं भवति'

प्रसंग है, वे दोनों कर्म करते हैं-जो 'ओम्' के यथार्थ रहस्य को जानता है वह भी और जो नहीं जानता वह भी। कर्मफल दोनों को समान होना है, फिर जानना व्यर्थ है। जिज्ञास्य है कि उपासना सहित कर्म चित्तशुद्धि द्वारा ज्ञान का उत्पादक है अथवा उपासना रहित भी।

गुरु-काम्य और निष्काम दोनों प्रकार के कर्म चित्तशुद्धि आदि में उपकारक हैं। पर जो कर्म श्रद्धापूर्वक योगविधि के अनुसार उपासना सहित किया जाता है, वही अधिक वीर्यवान् होता है (छा. १।१।१०)। अभिलषित फल के उत्पादन में शीघ्र समर्थ होता है। छान्दोग्य के उक्त सन्दर्भ में दोनों का सन्तुलन यह प्रकट करता है कि उपासना रहित कर्म भी चित्त-शुद्धि आदि में साधारण उपकारक होता है और ऐसी प्रवृत्ति कल्याणमार्ग की ओर कर्त्ता को उन्मुख रखती है। इस दिशा में निष्काम कर्म अधिक उपकारक होता है, पर केवल कर्म द्वारा ज्ञान का प्रादुर्भाव नहीं होता, उपासनासहित कर्म इसके लिये सक्षम माना जाता है। इसमें 'ओम्' द्वारा ब्रह्म की उपासना करने का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जो चाहता है कि शीघ्र ज्ञान हो जाये, उसे शास्त्रविधि के अनुसार उपासनासहित कर्म का अनुष्ठान करना आवश्यक है।

वेदों का पढ़ना

तदनन्तर पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य और वेदान्त अर्थात् जहाँ तक बन सके वहाँ तक ऋषिकृत व्याख्यासहित अविा उत्तम विद्वानों की सरल व्याख्याकृत छ: शास्त्रों को पढ़ें-पढ़ावें। परन्तु वेदान्त सूत्रों के पढ़ने से पूर्व ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतेरेय, तैत्तिरीय, छाँदोग्य और बृहदारण्यक इन दश उपनिषदों को पढ़के छ: शास्त्रों के भाष्य वृत्ति संहित सूत्रों को दो वर्ष के भीतर पढ़ावें और पढ़ लेवे पश्चात् छ: वर्षों के भीतर चारों ब्राह्मण, अर्थात् ऐतरेय, शतपथ साम और गोपथ ब्राह्मणों के सहित चारों वेदों के स्वर, शब्द, अर्थ सम्बन्ध तथा क्रिया सहित पढ़ना योग्य है। (स. प्र. तृ. ३ स.)

स्वामी दयानन्द के आने की ज़रूरत

पीर मुहम्मद मूनिस

विज्ञान कहता है कि कोई भी वस्तु नीचे की ओर सहज गति करती है, जब तक कि उस पर कोई बाहरी बल ना लगाया जाए। इसी तरह मनुष्य समाज को भी यदि उन्नति के लिए निरन्तर प्रेरणा न दी जाए तो उसका भी पतन प्रारम्भ हो जाता है। प्रेरणा देने वाली इन विभूतियों को हम महापुरुष की संज्ञा देते हैं। ऐसे महापुरुषों की संख्या संसार में कम नहीं है पर ऋषि दयानन्द इन सबसे भिन्न हैं, क्योंकि ऋषि ने जाति, मत-पन्थ, सम्प्रदाय, देश की सीमा से परे जाकर मनुष्य या यूँ कहें कि प्राणी मात्र के लिए कार्य किया। इसीलिए उन्होंने न किसी एक वर्ग के दोषों को गिनाया और न ही किसी वर्ग विशेष की प्रशंसा की, बल्कि जहाँ भी बुराइयाँ पनपतीं देखीं, उस वर्ग की निःसंकोच समीक्षा की और असत्य को छोड़ सत्य को अपनाने का आग्रह किया। यह कार्य मनुष्य के हित के लिए किया गया था, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या जैन-बौद्ध के लिए नहीं, इसलिए इसे मनुष्य ही समझ सकता है। हिन्दू, मुसलमान या ईसाइयत के नशे में तो दयानन्द शत्रु ही नज़र आएगा, ठीक वैसे ही जैसे शराब के नशे में चूर व्यक्ति के लिए दुग्ध आदि अमृत तुल्य पदार्थ। जो मनुष्य बनने से पहले ही हिन्दू-मुसलमान बन गया उससे सत्यासत्य के विचार की अपेक्षा ही व्यर्थ है। इस्लाम के विद्वान् लेखक पीर मुहम्मद मूनिस का महर्षि के प्रति यह विचार मनुष्यता की गोद में बैठकर किया गया विचार है। यह लेख 'दिव्य दयानन्द' पुस्तक में संकलित है, जो आचार्य सत्यानन्द नैष्ठिक द्वारा 'सत्य धर्म प्रकाशन' से प्रकाशित हुई है। -सम्पादक

१९वीं सदी के मध्य में जिस तरह यहाँ पर पाश्चात्य सभ्यता ने अपना प्रभुत्व जमाने की कोशिश की थी-यदि वही रविश २० वीं सदी में भी कायम रहती तो आज काशी, प्रयाग, अयोध्या और मथुरा की पुरानी सभ्यताओं पर फिदा होने वालों या राम-कृष्ण के नामलेवाओं की शुमार करने वाले लोगों को, उनकी शुमार करने में बहुत आसानी होती-लेकिन ''मेरे मन कुछ और है, विधना के कुछ और'' इस लोकोक्ति के अनुसार पाश्चात्य सभ्यता को अपना प्रभुत्व जमाने का काफ़ी मौका हाथ न आया और न वह यहाँ के लोगों को अपना सौदाई ही बना सकी।

यह प्रत्यक्ष है कि ''जिस जाति ने किसी समय महान् आत्माओं को उत्पन्न किया है, तो उस जाति में वह शक्ति विद्यमान है कि अनुकूल समय मिलने पर फिर अपने में से महान् आत्माओं को उत्पन्न कर सके।'' इसी सत्य सिद्धान्त के अनुसार **भारत की रत्नगर्भा, वीर प्रसविनी भूमि ने अपने गर्भ से वह अमूल्य रत्न, अद्वितीय विद्वान्, निर्भीक चेला, अटल ब्रह्मचारी और सच्चा देशभक्त-स्वामी दयानन्द उत्पन्न किया-जिसके अस्तित्व पर हिन्दू जाति ही नहीं बल्कि भारत की सभी जातियाँ जितना अभिमान करें, थोड़ा है।**

स्वामी दयानन्द ने भारतवर्ष को बहुत बुरी अवस्था में पाया। हिन्दू जाति अपनी पुरानी सभ्यता और मर्यादा को मिटा देने के लिए उधार खाये बैठी थी। मग़रिब की दिलफरेब सभ्यता को कुछ लोगों ने अपना लिया था और कुछ लोग अपनाने की उधेड़बुन में लगे हुए थे। आर्य सभ्यता झूठे ढकोसलों और दिखाऊ व्यवहारों में ऐसी छिपी हुई थी कि ढूँढने से जल्दी पता लगाना टेढ़ी खीर था। बहुत से हिन्दू लोग अपने को ऋषि-सन्तान कहने में हिचकते थे और मुक़द्दस वेद की हस्ती को यूरोपीय विद्वानों के सर्टिफिकेट द्वारा तसव्वर करते थे। मग़रिबी रंगोरोग़न उन लोगों के चेहरे पर अपना बदनुमा नकाब डाल चुका था। लेकिन, एक महर्षि दयानन्द ने अपने विद्याबल, कर्मबल और तपोबल से सारी कमज़ोरियों, अकर्मण्यता और बुराइयों को दूर कर दिया और हिन्दुओं को सच्चा हिन्दू, आर्य सन्तान और वेदों का हामी और अनुयायी बनाया। वैदिक-धर्म का झण्डा उठाया और सत्य सनातन धर्म का प्रचार करना शुरु किया। गुमराहों को राहेरास्ता पर लाया। बिछुड़े हुओं को गले लगाया और उन लोगों को सार्वभौम बन्धुत्व का पाठ पढ़ाया। एक बार फिर कपिल, कणाद, जैमिनि, पतञ्जलि, गौतम और व्यास के नामों की शङ्खध्वनि से आर्य्यावर्त्त गूँज उठा और चारों ओर वेद की ऋचायें सुनाई पड़ने लगीं। कुछ लोगों ने इस ब्रह्मचारी के विद्याबल और तपोबल के सामने अपना सिर झुकाना कबूल न किया और मुख़ालफत करने का मन्सबा बाँधा। लेकिन उनकी

मुख़ालफत की दलील इस विद्याबल के सामने टिक न सकी।

स्वामी दयानन्द जी ने हिन्दू समाज को उस पुरानी सभ्यता और रीति-रिवाज पर चलाने की कोशिश की, जिस सभ्यता को आर्य ऋषियों ने बहुत समय पहिले भारतवर्ष में कायम किया था। वैदिक धर्म का पुनरुत्थान किया और हिन्दुस्तानियों को सच्चा हिन्दुस्तानी बनने का मन्त्र पढ़ाया। लोगों को देश की अवस्था का ज्ञान कराया और राष्ट्रीय भाव की जागृति का उत्साह दिलाया। धार्मिक और सामाजिक उन्नति करने के लिए अपने अनुयायियों को मैदान में उतारा और स्वयं मैदान में आकर अपने विरोधियों को ललकारा। लेकिन अन्त में वही हुआ जिसकी गवाही संसार के इतिहास देने को तैयार हैं। सत्य का विजय हुआ-वैदिक धर्म का फिर से डंका बजा और भारतीयता को गौरव प्राप्त हुआ।

देशकाल के अनुसार स्वामी दयानन्द जी ने धार्मिक और सामाजिक उन्नति के साथ-साथ राजनैतिक उन्नति की ओर आर्य सन्तानों का ध्यान आकर्षित किया और राष्ट्र-निर्माण करने का प्रयत्न सोचा। आर्य सन्तानों के लिये विदेशी शासन मज़िर और खतरनाक बतलाया और उनको संगठित करने के लिए भारत में आर्यसमाज की नींव डाली। कुछ लोग इस समाज को देखकर चौकन्ने हुए, लेकिन इस चौकन्ने होने में दो लाभ हुए। भारतीयों की आँखें खुलीं और अपनी दशा को देखकर बेदार हुए और उठे। मेरे मुसलमान भाई इस बात के मानने से कतई इन्कार करेंगे और स्वामी दयानन्द जी की पाक हस्ती के उस प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष एहसानात से अपने को बरी होने की कोशिश करेंगे-लेकिन सच तो यह है कि अगर स्वामी दयानन्द जी १९ वीं सदी में न होते तो यक़ीनन हिन्दुस्तानियों पर मग़रिबी तहजीब और तर्जेमुआशरत मग़रिबी ख्यालात, मग़रिबी नोंक-झोंक, हाव-भाव और उस बुरे आदात ने जो अपना गहरा ताअलुक़ात पैदा कर लिया था, कुछ ही दिनों में यहाँ के पुराने मज़हबी जज़बात पर अपना असर डालते और उसे मिटा डालने की कोशिश करते। ईसाइयत और मग़रिबी तहज़ीब के मुख्य पुरख़तर हमले से हिन्दुस्तानियों को सावधान करने का सेहरा अगर किसी व्यक्ति के सिर पर बाँधने का सौभाग्य प्राप्त हो-तो स्वामी दयानन्द जी की ओर इशारा किया जा सकता है।

यह बख़ूबी रौशन है कि पड़ोसी का असर पड़ोसी पर पड़ता है। अगर हिन्दू मग़रिबी तहजीब की प्रचलित बुराइयों में फँसे हुए थे-तो मुसलमान उससे पाक-साफ न थे। दोनों अपने ख़्यालात और सुभीते के अनुसार मग़रिब की दिलफ़रेब तहज़ीब के दिलदाद हो रहे थे और मुमकिन था कि कुछ ही दिनों में हज़रत मसीह के तक़लीद की पैरवी करने पर आमादा हो जाते। आँधी चल रही थी, वृक्ष डोल रहे थे- आकाश में गर्दोगुब्बार छा गया था-ऐसे विकट समय में एक चतुर उपदेशक के प्रादुर्भाव की सख़्त जरूरत थी- प्रकृति के नियम के अनुसार एक उपदेशक का प्रादुर्भाव हुआ, उसने हवा के रुख को बदला। लोगों को अन्धबुझक्कड़ों से बचाया और अपने उपदेशों से चारों ओर प्रकाश फैलाया।

जिस प्रकार हिन्दुओं के सिर पर मग़रिबी तहज़ीब, अखलाक़ और तमद्दुन की अब्रोहमत अपनी साया किये हुए थी-ठीक उसी तरह मुसलमानों के सिर पर भी अपनी साया करने में उसने किसी तरह की कोताही नहीं की। जिस प्रकार हिन्दू नास्तिकता के अन्धेरे गार में गिरे जा रहे थे-उसी प्रकार मुसलमानों ने अपने हमवतन भाइयों का साथ देना कबूल किया था। किसी न किसी तरह मग़रिब बुराइयों की शिकार-दोनो कौमें हो चुकी थीं-ऐसे वक्त में उन मग़रिबी तहज़ीब की बुराइयों से बचाने वाला, हिन्दुस्तानियों की आँखों की पट्टी खोलने वाला अगर कोई था, तो बिला मोबालगह मानना लाज़िम होगा कि इनमें स्वामी दयानन्द की जाति थी और उनका मिशन भी था, जिन्होंने हिन्दुस्तानियों की आँखों के सामने से मग़रिब की दामोफ़रेब का पर्दा उठाया और उनकी असली सूरत दिखला दी। लोगों को बतलाया कि मग़रिब की हाव-भाव हिन्दुस्तानियों के लिये असबाबे बुराई है। हिन्दु चेते और राहेरास्ते पर आये। कोई वज़ह नहीं थी कि हिन्दू भाइयों की देखा-देखी मुसलमान न सम्भलें-क्योंकि पड़ोसी की देखा-देखी पड़ोसी बेदार होता है। इसी सिद्धान्त के अनुसार मुसलमानों ने हिन्दू भाइयों की देखा-देखी मग़रिब की दिलफरेब तहज़ीब की बुराइयों की ओर से अपने को खींचा-सच्चे मुसलमान कुछ-कुछ वतनपरस्ती का राग अलापने लगे। अगर १९ वीं सदी में स्वामी दयानन्द जी न होते तो मग़रिबी तहज़ीब की बुराइयों से हिन्दुस्तानियों की आँखें न खुलतीं और न आज के दिन मज़हब और देश का राग अलापने की नौबत आती।

१९ वीं सदी में स्वामी दयानन्द जी ने भारत के लिये

जो अमूल्य काम किया है उससे हिन्दू जाति के साथ-साथ मुसलमानों तथा दूसरे धर्मावलम्बियों को भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बहुत लाभ पहुँचा है।

अगर राजनैतिक दृष्टि से विचार किया जाय तो भी नि:सकोच मानना पड़ेगा कि भारत की वर्तमान राष्ट्रीय जागृति में स्वामी दयानन्द जी और उनके उपदेशों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बहुत कुछ प्रभाव हिन्दू जनता पर पड़ा है। एक प्रकार से कहना अनुचित न होगा कि १९ वीं सदी के भारतीय राष्ट्र निर्माणकर्त्ताओं में स्वामी जी की शुमार सबसे पहिले नहीं, तो किसी प्रकार पीछे भी नहीं हो सकती। लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल, श्यामजी कृष्ण वर्मा, भाई परमानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द आदि उसी गुलशन के खुशगवार और सरसज़ पौधे हैं, जिनको स्वामी दयानन्द जैसे चतुर माली ने अपने उपदेश जल से सींच-सींच कर इतना बड़ा बनाया है-जिनकी सायों के नीचे बैठने के लिए हर शख़्स को रश्क होता है। भारत के राष्ट्रनिर्माण में स्वामी दयानन्द के मिशन ने बहुत कुछ आगे बढ़कर काम किया है। आर्यसमाज को भारतीय उत्थान का बहुत बड़ा श्रेय और गौरव प्राप्त हो सकता है और इस समाज में राष्ट्रनिर्माण का एक प्रधान स्तम्भ करार देना सर्वथा उचित प्रतीत होता है। अछूतोद्धार के प्रश्न को राष्ट्रीय महासभा ने हल करने की अब अमली कोशिश की है, लेकिन स्वामी दयानन्द जी ने इस मुहलिक मर्ज़ के हमले से बचाने के लिये पहिले ही से अमली कोशिश कर रखी थी और बहुत कुछ सफलता भी हुई। अतएव इन सब बातों पर ध्यान देने से नि:संकोच मानना पड़ता है कि भारतीय राष्ट्रीय निर्माण में स्वामी दयानन्द और उनके मिशन का एक खास भाग है।

ऊपर की सारी बातों पर ध्यान देने से और निष्पक्षपात होकर विचारने से मालूम होता है कि स्वामी दयानन्द जी ने भारतवर्ष की भलाई और राष्ट्रीय जागृति के लिये जो कुछ किया वह केवल किसी समाज विशेष के लिये नहीं और न किसी जाति विशेष का हित सोचकर किया बल्कि वह भारतवर्ष के लोगों को उस सत्य-युग के आदर्श को सामने रखकर उसी के पथ पर भारतीयों को चलाने के लिए उठाने आया था।

साभार-'दिव्य दयानन्द'

सभी वर्ण के नर-नारियों में विद्या और धर्म का प्रचार आवश्यक

जो ब्राह्मण हैं वे ही केवल विद्याभ्यास करें और क्षत्रियादि न करें तो विद्या, धर्म, राज्य और धनादि की वृद्धि कभी नहीं हो सकती। क्योंकि ब्राह्मण तो केवल पढ़ने-पढ़ाने और क्षत्रियादि से जीविका को प्राप्त होके जीवन धारण कर सकते हैं। जीविका के आधीन और क्षत्रियादि के आज्ञा दाता और यथावत् परीक्ष दण्डडाता न होने से ब्राह्मणादि सब वर्ण पाखण्ड ही में फंस जाते हैं और जब क्षत्रियादि विद्वान होते हैं तब ब्राह्मण भी अधिक विद्याभ्यास और धर्मपथ में चलते हैं और उन क्षत्रियादि विद्वानों के सामने पाखण्ड, झूठा व्यवहार भी नहीं कर सकते और जब क्षत्रियादि अविद्वान् होते हैं तो वे जैसा अपने मन में आता है वैसा ही करते कराते हैं। इसलिए ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहेंतो क्षत्रियादि को वेदादि सत्यशास्त्र का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें क्योंकि क्षत्रियादि ही विद्या, धर्म, राज्य और लक्ष्मी की वृद्धि करनेहारे हैं, वे कभी भिक्षावृत्ति नहीं कर सकते, इसलिए वे विद्याव्यवहार में पक्षपाती भी नहीं हो सकते। और जब सब वर्णों में विद्या सुशिक्षा होती है तब कोई भी पाखण्ड रूप, अकर्म युक्त मिथ्या व्यवहार को नहीं चला सकता। इससे क्या सिद्ध हुआ कि क्षत्रियादि को नियम में चलाने वाले ब्राह्मण और संन्यासी तथा ब्राह्मण और संन्यासी को सुनियम में चलाने वाले क्षत्रियादि होते हैं। इसलिए सब वर्णों के स्त्री-पुरुषों में विद्या और धर्म का प्रचार अवश्य होना चाहिए।

(स. प्र. स. ३)

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)-प्रथम खण्ड

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ४५०/- **पृष्ठ**- ४०८

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अवैदिक मान्यताओं के खण्डन एवं वैदिक विचारधारा की प्रतिष्ठा के लिये लेखन और उपदेश दोनों ही विधाओं का भरपूर उपयोग किया। उनके बलिदान के पश्चात् उनके जिन शिष्यों ने इस कार्य को गति दी, उनमें पण्डित लेखराम का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पण्डित जी की उपस्थिति का आभास मात्र ही विरोधियों के अन्तस् को कँपाने के लिये पर्याप्त होता था। उस मनीषी के मौखिक उपदेश तो संग्रहित नहीं हो पाये, परन्तु उनकी धारदार लेखनी से निकले वाक्य हमारे पास आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' के नाम से जाना जाता है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका यह प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया है। दूसरा प्रकाशनाधीन है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जो कि कई भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्होंने इसका कुशल सम्पादन किया है।

२. अष्टाध्यायी भाष्य- भाग २

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रुपये **पृष्ठ**- ४१४

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्तों, कर्मकाण्ड, वेदभाष्य आदि के साथ-साथ संस्कृत व्याकरण पर भी पर्याप्त साहित्य का निर्माण किया है। १४ खण्डों में प्रकाशित वेदांग-प्रकाश के साथ-साथ अष्टाध्यायी ग्रन्थ के चार अध्यायों तक का भाष्य भी किया। यह भाष्य तीन खण्डों में परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया गया, परन्तु इसका द्वितीय भाग समाप्त होने से यह अपूर्ण हो गया था। अब इसका दूसरा भाग भी छप चुका है, जिससे यह सम्पूर्ण रूप में व्याकरण के अध्येताओं को सुलभ हो गया है।

३. संस्कृत वाक्य प्रबोध

लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- ५०रुपये **पृष्ठ**- ११६

स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने यह 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में दैनिकचर्या में प्रायः प्रयोग होने वाले वाक्यों का संकलन है। ये वाक्य ५२ अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित हैं, यथा-गुरुशिष्य वार्तालाप प्रकरण, गृहाश्रम प्रकरण, नामनिवास-स्थान प्रकरण आदि। घर में बच्चों को संस्कृत सम्भाषण का ज्ञान कराने के लिये यह पुस्तक महर्षि द्वारा प्रदत्त उपहार है। छपाई एवं आवरण सौन्दर्य की दृष्टि से भी पुस्तक अत्यन्त आकर्षक है।

४. शङ्का-समाधान

लेखक- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा)

मूल्य- ७०/- रुपये **पृष्ठ**- १४०

परोपकारी पत्रिका कई वर्षों से निरन्तर शङ्का-समाधान की परम्परा चलाये हुए है, जिसके कि आर्यजगत् में बहुत ही सार्थक परिणाम हुए हैं। धर्म, दर्शन, सिद्धान्त, व्याकरण आदि विषयों पर आये प्रश्नों के सभी समाधान परोपकारी के अलग-अलग अंकों में होने कारण पाठकों को एक साथ उपलब्ध नहीं हो पाते थे। इन सबकी उपयोगिता एवं पाठकों की माँग को देखते हुए इन सबको पुस्तक का रूप दिया गया है। समाधानकर्ता डॉ. वेदपाल आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं, उनके शास्त्रीय ज्ञान से भरी यह पुस्तक सभा की ओर से स्वाध्यायशील आर्यों को सादर समर्पित है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

शङ्का समाधान - ४४

डॉ. वेदपाल

शङ्का- महर्षि ने उपदेश मञ्जरी (छठा उपदेश) में वेदोत्पत्ति, सृष्ट्युत्पत्ति (मनुष्योत्पत्ति) के पाँच वर्ष पश्चात् स्वीकार की है-''...ऐसी व्यवस्था आदि सृष्टि में पाँच वर्ष तक चलती रही, फिर परमात्मा ने मनुष्यों को वेदज्ञान दिया।'' इसके विपरीत 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में- ''जितने वर्ष अभी ऊपर गिन आए हैं, उतने ही वर्ष वेदों और जगत् की उत्पत्ति में भी हो चुके हैं।'' अत: वेदोत्पत्ति, सृष्ट्युत्पत्ति के दिन से मानी जाए या पाँच वर्ष बाद स्वीकार की जाए?

इन्द्रजित् देव, यमुनानगर

समाधान- महर्षि दयानन्द द्वारा सन् १८७५ में पूना में पचास से अधिक प्रवचन दिए गए थे। इनमें से पन्द्रह प्रवचन किसी श्रोता द्वारा लिपिबद्ध कर मराठी भाषा में प्रकाशित हुए। महर्षि के निधन के अनेक वर्ष पश्चात् इनका हिन्दी में अनुवाद हुआ। पं. गणेश रामचन्द्र द्वारा आरम्भ के नौ प्रवचनों का आर्यभाषा में किया अनुवाद बाबू रामविलास शारदा द्वारा 'आर्य पुस्तक प्रचारिणी सभा, राजस्थान' की ओर से सन् १८९३ में प्रकाशित हुआ था। इससे स्पष्ट है कि महर्षि प्रोक्त वक्तव्य यथाप्रोक्त छपकर अनूदित हुए यह कहना कठिन है। इसलिए महर्षि प्रोक्त एवं उनके जीवनकाल में प्रकाशित ग्रन्थों (सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि आदि) को उपदेश मञ्जरी पर अधिमान प्राप्त है।

वेदोत्पत्ति पर विचार करते समय मनुष्य की उत्पत्ति पर अति संक्षिप्त चर्चा अप्रासंगिक नहीं होगी। प्रथम यह विवेच्य है कि सर्गादि में उत्पन्न होने वाले मनुष्य बालक, युवा अथवा वृद्ध किस अवस्था के थे? महर्षि का अभिमत द्रष्टव्य है-

''**प्रश्न**- आदि सृष्टि में मनुष्य आदि की बाल्या, युवा वा वृद्धावस्था में सृष्टि हुई थी अथवा तीनों में?

उत्तर- युवावस्था में, क्योंकि जो बालक उत्पन्न करता तो उनके पालने के लिए दूसरे मनुष्य आवश्यक होते और जो वृद्धावस्था में बनाता तो मैथुनी सृष्टि न होती, इसलिए युवावस्था में सृष्टि की है।'' द्रष्टव्य- सत्यार्थप्रकाश समु. ८, पृ. १४७

अत: युवा होने के कारण वे ज्ञान धारण करने में पूर्णत: समर्थ थे। उन्हीं में से चार श्रेष्ठ आत्माओं/ऋषियों को वेद ज्ञान प्राप्त हुआ। इस विषय में सत्यार्थप्रकाश समुल्लास सात द्रष्टव्य है। अब प्रश्न वेदोत्पत्ति-काल का है। महर्षि का अभिमत है-

''**प्रश्न**- वेदों की उत्पत्ति में कितने वर्ष हो गए हैं?

उत्तर- एक वृन्द, छानवें करोड़, आठ लाख, बावन हजार, नव सौ छहत्तर अर्थात् (१९६०८५२९७६) वर्ष वेदों की और जगत् की उत्पत्ति में हो गए हैं और संवत् सत्तहत्तरवाँ वर्त्त रहा है।''- ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-वेदोत्पत्ति विषय, पृ. २२

महर्षि की यह गणना संवत् १९३३ वि. की है। इस समय संवत् २०७५ है। अत: महर्षि प्रोक्त गणना में १४२ एक सौ बयालीस वर्ष और जोड़ने पर यह संख्या **एक अरब छियानवें करोड़ आठ लाख तरेपन हजार एक सौ उन्नीस वर्ष होती है।**

सृष्ट्युत्पत्ति के पाँच वर्ष पश्चात् वेदोत्पत्ति मानने पर यह प्रश्न स्वाभाविक है कि यदि बिना वेदज्ञान के स्वाभाविक ज्ञान के सहारे व्यवहार चलता रहा, तब पाँच वर्ष पश्चात् अचानक क्या आवश्यकता आ गयी थी? जिस प्रकार पाँच वर्ष कार्य चलता रहा वैसे भविष्य में भी चलता रह सकता था। नैमित्तिक ज्ञान के अभाव में आज भी मानव मानवोचित व्यवहार नहीं जान सकता। जैसा आज नैमित्तिक ज्ञान अपेक्षित है वैसा ही सर्गारम्भ में भी अपेक्षित था। वेदोत्पत्ति विषय के अन्त में महर्षि का स्पष्ट कथन है-''**जितने वर्ष अभी ऊपर गिन आए हैं, उतने ही वर्ष वेदों और जगत् की उत्पत्ति में भी हो चुके हैं।**''

अत: वेदोत्पत्ति मानवोत्पत्ति के साथ ही मानना उचित है। यहाँ सृष्ट्युत्पत्ति का अभिप्राय मानव की उत्पत्ति से ही है, सृष्ट्युत्पत्ति के प्रारम्भिक क्षण से नहीं।

पं. लेखराम के ग्रन्थ संग्रह
'कुल्लियाते आर्यमुसाफिर' का प्रथम भाग प्रकाशित
दूसरे भाग का प्रकाशन कार्य प्रगति पर

पं. लेखराम आर्यमुसाफिर का ग्रन्थ संग्रह ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' जो कि एक दुर्लभ ग्रन्थ बन चुका था, परोपकारिणी सभा ने उसे पुन: प्रकाशित करने का संकल्प लिया। जिसका सुखद परिणाम यह है कि इस अमूल्य निधि का प्रथम खण्ड महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३५ वें बलिदान दिवस के अवसर पर छपकर तैयार हो चुका है। दूसरा भाग कुछ ही समय उपरान्त सुधी आर्यजनों को उपलब्ध होगा। इस ग्रन्थ के सम्पादन के गुरुतर कार्य में आर्यसमाज के ज्ञानवृद्ध विद्वान् व परोपकारिणी सभा के सम्मानित उपप्रधान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु ने जो महनीय परिश्रम किया है, उससे इस ग्रन्थ की महत्ता में और अधिक वृद्धि हुई है। सभा उनका हृदय से आभार व्यक्त करती है। साथ ही जिन महानुभावों ने इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया, उनका भी सभा धन्यवाद ज्ञापित करती है। सहयोगी जनों के नाम ग्रन्थ में प्रकाशित भी किये गये हैं।

अब जबकि दूसरा भाग छपने के लिये तैयार है, ऐसे में आर्यजन अपने सहयोग से इस ज्ञानयज्ञ को सम्पन्न करेंगे, ऐसी आशा है। - **मन्त्री**

साहित्य के प्रकाशन में अपना सहयोग दें

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर साहित्य प्रकाशन का निरन्तर विस्तार कर रही है। महर्षि द्वारा रचित साहित्य को प्राथमिकता से प्रकाशित किया जा रहा है। इसी क्रम में सभा निम्न पुस्तकों को प्रकाशित कर रही है-

१. **महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ**- नामक पुस्तक नये कलेवर में, सुन्दर साज-सज्जा के साथ पुन: प्रकाशित की जा रही है। यह ग्रन्थ शीघ्र ही छपकर आर्यजनों के हाथों में होगा। इस ग्रन्थ की लागत लगभग ५१,०००/- (इक्यावन हजार रुपये) आयेगी।

२. आत्मकथा (महर्षि दयानन्द सरस्वती)-यद्यपि यह पुस्तक 'दयानन्द ग्रन्थमाला' में छप चुकी है, परन्तु पृथक् पुस्तक के रूप में भी यह पाठकों को उपलब्ध हो, इसलिये इसका नया संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। इस पुस्तक की छपाई का सम्पूर्ण व्यय लगभग ३१,०००/- (इकत्तीस हजार रुपये) होगा।

३. व्यवहार भानु- महर्षि द्वारा लिखित इस पुस्तक का नया आकर्षक संस्करण प्रकाशित करने का व्यय भी लगभग ३१,०००/-(इकत्तीस हजार रुपये) आयेगा।

४. डॉ. धर्मवीर जी के सम्पादकीय-परोपकारिणी सभा के पूर्व प्रधान व परोपकारी पत्रिका के प्राणभूत सम्पादक स्मृतिशेष डॉ. धर्मवीर जी की ज्ञानप्रसूता लेखनी से लिखे गये सम्पादकीय लेख समाज की धरोहर हैं। उन्हें भी सभा अलग-अलग पुस्तकों में विषयानुसार विभाजित करके छाप रही है। जिसमें 'भाषा और शिक्षा' पर लिखे सम्पादकीय 'अंग्रेज जीत रहा है' नामक पुस्तक में छप चुके हैं। इसी क्रम में आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द एवं वैदिक सिद्धान्तों पर लिखे गये सम्पादकीयों का संकलन भी प्रकाशित किया जा रहा है। इस पुस्तक का व्यय लगभग ७०,०००/-(सत्तर हजार रुपये) होगा।

जो सज्जन इन पुस्तकों का सम्पूर्ण व्यय देकर अपनी ओर से प्रकाशित कराना चाहें, उनका परिचय चित्र सहित पुस्तक में दिया जायेगा। इस कार्य में मुक्त हस्त से सभा को सहयोग करें। - **मन्त्री**

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

मनुष्य के जीवन-चक्र का व्यवस्थापक ओ३म् प्रमुख नाम ईश्वर है। यह ईश्वर जड़-चेतन का शासक है, शिव है, कल्याणकारक है, ब्रह्म है, बड़ा है। इस शिव कल्याणकारक, ब्रह्म आदि उपाधि वाले बड़े की प्राप्ति के लिये बड़े-बड़े प्रयत्न किये जाते हैं, पर्व मनाये जाते हैं।

उन अनेक पर्वों में एक पर्व शिवरात्रि पर्व है। यह पर्व अध्यात्म का पर्व माना जाता है। ओ३म्, विष्णु, शिव आदि अनेक नाम वाले ईश्वर की उपलब्धि का यह पर्व प्रसिद्ध है। इस पर्व पर शिव कल्याणकारक, ब्रह्म, परमेश्वर की उपलब्धि के लिये दुग्ध, पुष्प-अभिषेक, मन्त्रजाप, नर्तन, कीर्तन, गायन, वादन, जागरण किये जाते हैं और कल्पना के पुल बाँधे जाते हैं कि शिवरात्रि की रात में जैसे पूर्णिमा, अमावस्या के दिन समुद्र का पानी ऊपर उठता है, वैसे ही मनुष्य के अन्दर ऊपर की ओर ऊर्जा उठती है, इस कल्पना में ही शिवभक्त नाचते, कूदते रहते हैं, पर यह कल्पना असम्भव ही रहती है। बड़े ब्रह्म की प्राप्ति के लिए इन्द्रियसंयम, मनोनिग्रह, आत्मयोजन अपेक्षित होते हैं।

परमेश्वर की प्राप्ति के निमित्त वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति आदि ग्रन्थों में इन अपेक्षित उपायों का ही निर्देश है।

वेदोक्त ईश्वर-प्राप्ति का उपाय- ब्रह्मप्राप्ति का उपाय बताते हुए **वेद** में कहा है-

युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोकऽएतु पथ्येव सूरेः।
शृण्वन्तु विश्वेऽअमृतस्य पुत्राऽआ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः।।

यजु. ११/५।।

अर्थात् **श्लोकः**= वेदमन्त्रों के (श्लोक इति वाङ्नाम, निघ. १/११), **नमोभिः**=स्तवन, स्तुति द्वारा, **पूर्व्यम्**=पहले, सदा से ही विद्यमान ब्रह्म, बड़े, व्यापक ईश्वर से, **वां युजे**=तुम लोग युक्त होओ, **सूरेः**=विद्वान्, ज्ञानी के, **पथ्या इव**= उत्तम व्यवहार के समान, **वि एतु**= प्राप्त होओ, **विश्वे**= सम्पूर्ण, सभी, **अमृतस्य पुत्राः**= मुझ अमर, अविनाशी ईश्वर की उत्तम सन्तानें, **शृण्वन्तु**=सुनें, कि ये **दिव्यानि धामानि**= जो परमेश्वर प्राप्ति के दिव्य मार्ग हैं, उनको, **आ तस्थुः**=प्राप्त करो, उनमें बैठो।

मन्त्र से स्पष्ट है कि परमेश्वर प्राप्ति का उपाय- **श्लोकः नमोभिः**= वेद मन्त्रों का स्तवन, कथन, वदन, पठन-पाठन है। जो भक्त **श्लोकः नमोभिः** वेद मन्त्रों से परमेश्वर की स्तुति करते हैं, मन्त्रों से उसका जाप करते हैं वे **पूर्व्यम् ब्रह्म**=पहले, सदा से विद्यमान ब्रह्म को प्राप्त करते हैं। वेदोक्त विधि से परमेश्वर का ध्यान करने वाले, **अमृतस्य पुत्राः**=ब्रह्म के अमृत पुत्र कहे जाते हैं।

ब्राह्मणोक्त ईश्वर-प्राप्ति का उपाय- ब्रह्म प्राप्ति के वेदोक्त उपाय का ही **ब्राह्मण ग्रन्थ** भी निर्देश करते हैं। ब्राह्मणग्रन्थोक्त वाक्य है-

तस्मान्मन्त्रवन्तेव ब्रह्मौदनमुपेयान्नामन्त्रवन्तमिति ब्राह्मणम्।

गोप. ब्रा. १/२/१६।।

अर्थात् **तस्मात्**= इस कारण, **मन्त्रवन्तेव**=मन्त्र वाले को ही, **ब्रह्मौदनम्**=ब्रह्मज्ञानियों का अन्न, प्राप्य, **उपेयात्**= प्राप्त होवे, **अमन्त्रवन्तम्**= बिना मन्त्र वाले को यह **ब्रह्मौदन**= ब्रह्म का ज्ञानप्राप्त, **न**= न हो, ऐसा ब्राह्मण ग्रन्थ का कथन है।

गोपथ ब्राह्मण के इस कथन का तात्पर्य है कि ब्रह्म की प्राप्ति **ब्रह्मवाणी**=वेद-ज्ञान से होती है। ब्रह्म ओदन है, सबका भक्ष्य है, प्रापणीय है। उसे इस उपाय के द्वारा ही प्राप्त करने का उद्यम आवश्यक है।

उपनिषदुक्त ईश्वर-प्राप्ति का उपाय- शिव, कल्याणकारक, ब्रह्म, बड़े की प्राप्ति का निर्देश करते हुए उपनिषद् में कहा है-

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।।

मुण्ड. उप. २/२/४।।

अर्थात् ब्रह्मप्राप्ति में **प्रणवः**= ब्रह्मवाचक ओ३म् पद, **धनुः**= धनुष, **हि**=और, **शरः**=बाण, **आत्मा**=जीवात्मा है, ब्रह्मप्राप्ति का **ब्रह्म**=परमात्मा, **तत् लक्ष्यम्**=उपासक जीव का लक्ष्य, **उच्यतेः**=कहा गया है, उस **लक्ष्य** को,

अप्रमत्तेन=प्रमादरहित होकर, **वेद्धव्यम्**=बींधना चाहिए, और बेधक, **शरवत्**=बाण के समान, **तन्मयः**=उस ब्रह्म-लक्ष्य में, **भवेत्**=प्रविष्ट होवे।

मुण्डकोपनिषद् वचन का भाव है कि **ब्रह्म की प्राप्ति ओ३म् पद के जाप से होती है, जो ब्रह्म का मुख्य नाम है।** ब्रह्म-प्राप्ति में मनुष्य का आत्मा बाण स्थानी होता है। आत्मा के बिना नियुक्त हुए ब्रह्म प्राप्त नहीं होता। मनुष्य जीवन का लक्ष्य ब्रह्म है, ब्रह्म यदि प्राप्त नहीं हुआ तो जीवन-चक्र ऊपर-नीचे होता ही रहेगा, आनन्द उपलब्ध नहीं होगा। आनन्द की उपलब्धि के लिए प्रमाद का त्याग भी नितान्त आवश्यक है, प्रमादी व्यक्ति ब्रह्म तक नहीं पहुँच सकता। प्रमाद इतना परे हो जाये, जैसे सनसनाता हुआ बाण लक्ष्यभूत पदार्थ में प्रविष्ट हो जाता है, वैसे ही निरालसी जीव की आत्मा ब्रह्म-लक्ष्य में स्थिर हो जाये।

दर्शनग्रन्थोक्त ईश्वर-प्राप्ति का उपाय-

योगदर्शनकार पतञ्जलि का निर्देश है ब्रह्म-प्राप्ति की स्थिरता आसनों के सम्यक् ज्ञान से आती है। सूत्र है-

स्थिरसुखमासनम्।। योग द. २/४६।।

अर्थात् **आसनम्**=पद्मासन, भद्रासन आदि आसन (**पद्मासनं वीरासनं भद्रासनं स्वस्तिकं दण्डासनं सोपाश्रयं पर्यङ्क क्रौञ्चनिषदनं हस्तिनिषदनमुष्ट्रनिषदनं समसंस्थानं स्थिरसुखं यथासुखं चेत्येवमादीनि**, व्यासभाष्य योग. २/४६।।) **स्थिरसुखम्**=स्थिर तथा सुखदायक होते हैं।

यहाँ महर्षि पतञ्जलि ने आसन की चर्चा में **स्थिरता** और **सुख** ये-ये विशेष तथ्य निर्देश किये हैं। **स्थिरता का अभिप्राय है**-उपासना के समय शरीर के किसी भी अंग का चलना न हो, शरीर के प्रत्येक अवयव निश्चल, गतिरहित हों। मच्छर, मक्खी आदि क्षुद्र जन्तु तक के बैठने, खाज, खुजली के होने पर स्थैर्य भंग न हो, शरीर अचल रहे, अन्यथा शरीर के चलने, चंचल होने पर चित्त चंचल हो उठेगा, तो आसन ऐसा हो, जो स्थिरता प्रदान करे। **सुख का तात्पर्य है**- ब्रह्म-प्राप्ति के निमित्त जो आसन चयन किया हो, वह कष्टदायक न हो, पद्मासन आदि आसन ठीक से अभ्यस्त हों, नहीं तो अभ्यास न होने पर घुटने, गर्दन आदि पीड़ा से भर जायेंगे। आसन लगाने का स्थान ऊँची भूमि से रहित हो, भूमि की समता के लिए वस्त्र, गद्दी का उपयोग भी उचित है। आसन लगाने का स्थान, एकान्त, पवित्र, शुद्ध वायु वाला भी अपेक्षित है। इतना ही नहीं! युक्त आहार, विहार, शुद्ध आहार, उचित शयन-जागरण, शारीरिक श्रम, व्यायाम करना एवं हिंसा, राग, द्वेषादि का परित्याग भी अत्यन्त आवश्यक है।

सुखद आसन बनाने का ज्ञापन करते हुए पतञ्जलि आगे कहते हैं-

प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम्।। योग द. २/४७।।

अर्थात् **प्रयत्न शैथिल्य**= शारीरिक चेष्टा को रोकने एवं, **अनन्त**= असीमित, सर्वव्यापक परमात्मा में, **समापत्तिभ्याम्**= समापत्ति तादात्म्य भाव द्वारा मन को लगाने से **आसन**= बैठना, स्थिर व सुखद होता है।

कथन का आशय है ब्रह्म की प्राप्ति के लिए हमारी चेष्टाएँ नितान्त दूर हों, उपासक स्थिर हो, उसका मन ईश्वर में रत हो, तभी ब्रह्म-प्राप्ति में बैठने की सुखद अनुभूति होती है।

वेदान्तदर्शन में तो अतिस्पष्ट शब्दों में कहा है-

अचलत्वञ्चापेक्ष्य। वेदा. द. ४/१/९।।

अर्थात् निश्चलता की अपेक्षा से ही शास्त्रों में अन्यत्र ध्यान शब्द का प्रयोग हुआ है।

तात्पर्य हुआ ब्रह्म-प्राप्ति में चञ्चलता, शरीर-चेष्टा, घूमना, फिरना, परिक्रमा सब वर्जित हैं, अनुचित हैं।

स्मृतियों में ईश्वर प्राप्ति का उपाय- मनु महाराज ब्रह्मप्राप्ति का उपाय बताते हुए कहते हैं-

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।।

मनुः २/२८।।

अर्थात् **स्वाध्यायेन**= वेदत्रयी के पठन-पाठन, **व्रतैः**=अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के पालन, **होमैः**=अग्निहोत्रादि होम, **त्रैविद्येन**=इन ३ ज्ञान, कर्म, उपासना **इज्यया**=पक्षेष्टि, **सुतैः**=सुसन्तानोत्पत्ति और **महायज्ञैः**= ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ व अतिथियज्ञ के करने, **च**= और, **यज्ञैः**=अग्निष्टोमादि यज्ञों के अनुष्ठान से, **तनुः**=शरीर, **ब्राह्मीयम्**=ब्रह्म-प्राप्ति के योग्य, **क्रियते**=बनता है।

मनु महाराज के ब्रह्म-प्राप्ति के उपायों से अधिगत है कि ब्रह्म की प्राप्ति स्वाध्याय, यज्ञ यागादि, सत्यभाषाणादि कार्यों से होती है। पुष्पार्चन, दुग्धार्चन, जलार्चन, भजन, कीर्तन, नर्तन, जागरण से नहीं होती।

शिवरात्रि पर्व सार्थकता

शिवरात्रि पर्व अध्यात्म का पर्व है, ईश्वर की उपलब्धि का पर्व है। इस पर्व पर ईश्वर की उपलब्धि के लिए वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति ग्रन्थोक्त उपाय ही करने योग्य हैं। इन शास्त्रोक्त उपायों को करने पर ही ब्रह्म, कल्याणकारक, शिवशंकर परमेश्वर की उपलब्धि संभव है, पर्व की सार्थकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का शिवरात्रि-व्रत

परम्परानुसार महर्षि दयानन्द सरस्वती से भी उनके पिता मान्य कर्षन जी ने फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी १८९४ संवत् को शिवरात्रि का व्रत कराया था। व्रत के तथाकथित उपदेश भी निर्दिष्ट किये थे, पर उस व्रत में विद्यासागर, व्याकरणसूर्य श्री स्वामी दण्डी विरजानन्द जी के भावी शिष्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपनी बुद्धि को विवेक से रहित नहीं किया था, उनका विवेक उद्‌बुद्ध था। व्रत के ताम-झाम, अनुष्ठान निरर्थक हैं, यह उन्होंने अपनी ब्रह्मरत आत्मा से परख लिया था। ब्रह्म की उपासना में कोई भी पदार्थ, कोई भी गति, भ्रमण सब अयथार्थ हैं, यह समझ लिया था। अपनी इस समझ का बोध जन-जन तक पहुँचाने का उन्होंने आजीवन प्रयत्न किया, एतद् विषयक अनेकों ग्रन्थ लिखे।

वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति आदि शास्त्रोक्त उपायों को स्वयं अपनाया, दूसरों के हित के लिए पंचमहायज्ञविधि, संस्कारविधि, सत्यार्थप्रकाश, वेदभाष्य, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि स्वग्रन्थों में ब्रह्म-प्राप्ति के शास्त्रोक्त सप्रमाण उपाय निर्दिष्ट किये। ब्रह्मप्राप्ति की उपाय भूत उपासना का निर्देश करते हुए उन्होंने लिखा है-

इदानीमुपासना कथंरीत्या कर्त्तव्येति लिख्यते- तत्र शुद्ध एकान्तेऽभीष्टे देशे शुद्धमानसः समाहितो भूत्वा, सर्वाणीन्द्रियाणि मनश्चैकाग्रीकृत्य, सच्चिदानन्दस्वरूपमन्तर्यामिनं न्यायकारिणं परमात्मनं सञ्चिन्त्य, तत्रात्मानं नियोज्य च तस्यैव स्तुतिप्रार्थनानुष्ठाने सम्यक्कृत्वोपासनयेश्वरे पुनः पुनः स्वात्मानं संलगयेत्। उपासनाविषयः।

ऋग्वेदादि. पृ. १७६।।

अर्थात् अब उपासना किस विधि से करनी चाहिए, यह विषय लिखा जाता है-

तत्र=उस ईश्वर की उपासना में शुद्ध, एकान्त, इच्छानुकूल स्थान पर बैठकर, मन शुद्ध करके, ईश्वर में समाहित होकर, सभी इन्द्रियों और मन को एकाग्र करके, सत्, चित्, आनन्द स्वरूप वाले, अन्तर्यामी, व्यापक, न्यायकारी परमात्मा का चिन्तन करके अपनी आत्मा को ईश्वर में युक्त करके, उस ईश्वर की ही स्तुति-प्रार्थना के अनुष्ठान को भली प्रकार करके उपासना द्वारा ईश्वर में **पुनः पुनः**= बार-बार, **स्वात्मानम्**= अपनी आत्मा को, अपने आप को, **संलगयेत्**= उपासक लगा दे।

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ब्रह्म प्राप्ति के उपाय भूत उपासना निर्देश द्वारा सचेत किया है कि कल्याणकारक परमेश्वर ब्रह्म बाह्य साधनों से प्राप्त नहीं होता, इन्द्रियनिग्रह, मनः एकाग्रता, आत्मनियोजन से होता है। परमेश्वर की प्राप्ति की साधना, उपासना के लिए हिलना, डुलना, चलना निष्प्रयोजन कर्म हैं। ब्रह्म की प्राप्ति के लिये तो इन्द्रियसंयम, मनःशुद्धिकरण, एकान्त स्थान, ब्रह्म का स्वरूप ज्ञान परम आवश्यक हैं। परमेश्वर में स्व आत्मनियोजन अत्यन्त अनिवार्य है। उपासना में, ब्रह्मप्राप्ति में बाह्य साधन बाधक हैं, साधक नहीं।

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश है शिवरात्रि पर्व की इस धूमधाम में, महोत्सव में परमात्म-साधक उचित उपाय ही ग्रहण करने योग्य हैं, बाधक, निरर्थक नहीं।

आर्य कन्या गुरुकुल, शिवगंज, सिरोही, राज.।

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। (स. प्र. ३)

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. १२ से १९ मई, २०१९ - **आर्यवीर दल शिविर**

२. ०२ से ०९ जून, २०१९ - **आर्य वीराङ्गना शिविर**

३. १६ से २३ जून, २०१९- **योग-साधना शिविर**

४. १३ से २० अक्टूबर, २०१९- **योग-साधना शिविर**

५. ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ है।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की विशेष व्यवस्था है।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक की शास्त्री, आचार्य परीक्षा की तैयारी भी इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हो जाती है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की नि:शुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य विद्यादेव

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान

पुष्कर रोड, अजमेर।

९८७९५८७७५६

पठन-पाठन की विधि

पठन-पाठन आदि में लड़कों और लड़कियों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए कि वे स्थान और प्रयत्न के योग से वर्णों का ऐसा उच्चारण कर सकें कि जिससे सबको प्रिय लगे। जैसे (स) इसके उच्चारण में दो प्रकार का ज्ञान होना चाहिए एक स्थान और दूसरा प्रयत्न का। पकार का उच्चारण ओठों से होता है, परन्तु दो ओठों को ठीक-ठीक मिला ही के पकार बोला जाता है। इसका ओष्ठ स्थान और स्पष्ट प्रयत्न है और जो किसी अक्षर के स्थान में कोई स्वर वा व्यंजन मिला हो तो उसको भी उसी स्थान में प्रयत्न से उच्चारण करना उचित है।

(ऋ. भा. पठन.)

यज्ञ एवं प्रदूषण-समस्या

डॉ. जगदेव विद्यालङ्कार

वर्तमान युग में प्रदूषण की वृद्धि एक भयंकर समस्या बनती जा रही है। यह विश्वस्तर की समस्या है। कुछ वर्ष पूर्व एक पृथ्वी-सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें समस्त विश्व के बुद्धिजीवियों की चर्चा का मुख्य विषय प्रदूषण की समस्या ही था। अब भी शिक्षाविदों, वैज्ञानिकों, डॉक्टरों की गोष्ठियाँ इस विषय को लेकर होती ही रहती हैं, परन्तु कोई ठोस समाधान नहीं हो पाया है।

पर्यावरण में फैलने वाले प्रदूषण के कारण आकाश में स्थित ओजोन गैस की परत में छिद्र हो गये हैं, यदि इसी गति से छिद्र होते रहेंगे तो पराबैंगनी किरणों (Ultraviolet Rays) को रोकना संभव नहीं रहेगा, जिसके परिणामस्वरूप, कैंसर, हृदय- रोग, आँखों के रोगों में वृद्धि होगी और वृक्ष तथा वनस्पति भी प्रभावित होंगे। निरन्तर बढ़ रहे वायु-प्रदूषण पर यदि नियन्त्रण नहीं किया गया तो कुछ ही वर्षों में मनुष्यों को पानी की बोतल (Mineral Water) की तरह प्राण-वायु का सिलेंडर अपने साथ बाँधकर रखना पड़ेगा। चीन की राजधानी बीजिंग में कुछ लोगों ने ऐसा सिलेंडर अपने साथ रखना शुरु भी कर दिया है। प्रदूषण की समस्या का यदि कोई सामूहिक उपाय नहीं किया जायेगा तो मानव-जीवन ही संकट में पड़ जायेगा।

६० प्रतिशत वायु-प्रदूषण मोटरवाहनों से और ३५ प्रतिशत बड़े तथा मध्यम उद्योगों से तथा ५ प्रतिशत मनुष्य की दिनचर्या से फैलता है। जितना ऑक्सीजन एक व्यक्ति को एक वर्ष के लिए आवश्यक होता है उतना ऑक्सीजन एक मोटरवाहन लगभग ९७० किलोमीटर की यात्रा में फूँक डालता है। महानगरों में प्रदूषित वायु के कारण लोग २० सिगरेट के विष के बराबर प्रतिदिन अपने फेफड़ों में खींच लेते हैं।

प्रदूषण को दूर करने के मुख्य रूप से दो ही उपाय दृष्टिगत होते हैं-**पेड़ लगाना और यज्ञ करना।** पर्यावरण को सन्तुलित रखने के लिए ३३ प्रतिशत भूमि पर वन होना आवश्यक है। भारतवर्ष में वर्तमान में केवल १९ प्रतिशत भूमि पर वन हैं। मानव मात्र का और विशेषरूप से सरकार का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह अधिक से अधिक वृक्षारोपण को सुनिश्चित करे। एक बड़ा पूर्ण विकसित पेड़ उतनी मात्रा में ऑक्सीजन प्रदान करता है जितनी एक मनुष्य को पूरी आयु भर आवश्यक होती है।

भारत, चीन आदि अधिक जनसंख्या वाले देशों में प्रदूषण की समस्या अधिक है। तीव्र गति से बढ़ने वाले वाहनों पर सरकार द्वारा नियन्त्रण होना चाहिए। समाज को भी जागरूक करना चाहिए कि बहुत आवश्यक होने पर ही वाहन का प्रयोग करें। जहाँ तक हो सके पैदल और साइकिल का प्रयोग करें। पाश्चात्य जगत् इस विषय में बहुत जागरूक है। वे पैदल चलने में और साइकिल चलाने में बेइज्जती महसूस नहीं करते। हमारे देश के युवकों का तो साइकिल चलाने में स्तर गिर जाता है। सभी मनुष्यों को चाहिए कि वे अपने वाहन की समय पर सर्विस करवा लें। जिसका वाहन धुएँ से वायु को दूषित करता है उसका चालान निश्चित-रूप से होना ही चाहिए।

'आ बैल मुझे मार' की कहावत को चरितार्थ करते हुए सरकार ने मुख्य राजमार्गों पर हजारों की संख्या में टोल स्थापित कर दिए, जहाँ पर औसतन सभी वाहनों को पाँच मिनट तक रुकना पड़ता है। उसमें न केवल शुल्क के रूप में प्रतिदिन प्रजा को अरबों रुपये देने पड़ते हैं, अपितु औसतन पाँच मिनट में खड़े-खड़े करोड़ों रुपये का डीजल-पैट्रोल जलता है। इससे देश की जितनी आर्थिक हानि होती है उससे कई गुना अधिक व्यर्थ उत्पन्न किए प्रदूषण से स्वास्थ्य की हानि होती है। जब एक व्यक्ति नया वाहन खरीदता है तो उसका पर्याप्त पंजीकरण शुल्क प्रदान करता है, जिसका नाम ही रोड-टैक्स है अर्थात् सड़क- निर्माण के लिए है तो टोल-टैक्स के रूप में लोगों की जेब और स्वास्थ्य पर यह डाका क्यों डाला जाता है? मैं तो यह मानता हूँ यदि पंजीकृत शुल्क (रोड-टैक्स) कम है तो उसे बढ़ा लिया जाए, परन्तु इस टोल को सम्पूर्ण देश से तुरन्त समाप्त किया जाना चाहिए।

जैसे कोयले और डीजल की रेलगाड़ियाँ बन्द करके सरकार ने बिजली से चलाने की व्यवस्था की है, इसी प्रकार अन्य वाहनों के लिए भी कोई उपाय खोजा जा सकता है। कुछ बिजली से चार्ज होकर चलने वाली ई-रिक्शा और स्कूटी भी बाजार में आई हैं, उन्हीं का अधिक

से अधिक प्रयोग होना चाहिए।

प्रदूषण को दूर करने का दूसरा मुख्य उपाय **यज्ञ** है। जैसे वनों को निर्विवाद रूप से प्रदूषण का समाधान माना जाता है वैसे यज्ञ को निर्विवाद रूप से सम्पूर्ण जगत् प्रदूषण-निवारक नहीं मानता। रसायनशास्त्र का नियम है कि जब कोई दहन क्रिया होती है तो कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्पन्न होती है, परन्तु सामान्य दहन-क्रिया और यज्ञ की अग्नि में अत्यधिक अन्तर है। सामान्य रूप से जलने वाली अग्नि वायुमण्डल को दुर्गन्धित करती है जबकि यज्ञ की अग्नि में घी, सामग्री आदि पुष्टिकारक और रोगनाशक पदार्थ डाले जाते हैं जो वायु को सुगन्धित कर देते हैं। 'हाथ कंगन को आरसी क्या?' प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं। यज्ञ से उत्पन्न होने वाली सुगन्धि स्वयं सबसे बड़ा प्रमाण है।

वेदों और समस्त वैदिक साहित्य में यज्ञ की महिमा का प्रचुर वर्णन किया गया है और यज्ञ को प्रदूषण-निवारक माना गया है। महर्षि दयानन्द ने अपने समस्त ग्रन्थों में यज्ञ के महत्त्व पर प्रकाश डाला है। सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में ऋषि प्रतिपक्षी की उस बात का उत्तर देते हुए लिखते हैं कि घी को अग्नि में डाल के व्यर्थ नष्ट करना बुद्धिमानों का काम नहीं- ''जो तुम पदार्थ-विद्या जानते तो कभी ऐसी बात न कहते। क्योंकि किसी द्रव्य का अभाव नहीं होता। देखो! जहाँ होम होता है वहाँ से देश में स्थित पुरुष के नासिका से सुगन्ध का ग्रहण होता है वैसे दुर्गन्ध का भी। इतने ही से समझ लो कि अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म होके फैल के वायु के साथ दूर देश में जाकर दुर्गन्ध की निवृत्ति करता है।'' इससे सिद्ध होता है कि अग्नि में डाला हुआ घी खाने की अपेक्षा सौ गुना अधिक लाभदायक है। प्राचीनकाल में देश की सुख-समृद्धि का बयान करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं- ''इसीलिए आर्य शिरोमणि महाशय, ऋषि, महर्षि, राजे, महाराजे लोग बहुत सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम-कर्म का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित व सुखों से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो सकता है।'' ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में भी महर्षि लिखते हैं- ''जैसी यज्ञ से वायु और जल की उत्तम शुद्धि और पुष्टि होती है वैसी अन्य प्रकार से नहीं हो सकती।'' यज्ञ का उपदेश करते हुए महर्षि ने लिखा है कि जो यज्ञ से शुद्ध किए हुये अन्न, जल, वायु पदार्थ हैं वे सबकी शुद्धि करके बल, पराक्रम तथा दीर्घायु लिए समर्थ होते हैं। इसलिए सब मनुष्यों को यज्ञ कर्म अनुष्ठान नित्य करना चाहिए।

यज्ञ की उपयोगिता के सम्बन्ध में अनेक भारतीय, विदेशी विद्वानों ने अपने चिन्तन एवं अनुसन्धान के आधार पर सकारात्मक विचार व्यक्त किए हैं। पंजाब विश्वविद्यालय में रसायनशास्त्र के पूर्व अध्यक्ष डॉ. रामप्रकाश ने अपनी पुस्तक 'यज्ञ-विमर्श' में विस्तार से यज्ञ का विवेचन किया है, जिसका सार है कि यज्ञ प्रदूषण-निवारक है। अहमदाबाद विश्वविद्यालय के विज्ञान के पूर्व-अध्यक्ष डॉ. एस.डी. वर्मा कई वर्ष तक स्वामी सत्यपति से यज्ञ पर चर्चा करते रहे और अन्त में यह स्वीकार किया कि यज्ञ से प्रदूषण दूर होता है और अपने घर में दैनिक यज्ञ करने लगे। फर्ग्युसन कॉलेज पुणे के जीवाणु-शास्त्रियों ने एक प्रयोग किया, जिसमें एक बड़े कमरे में कृत्रिम प्रदूषण उत्पन्न करके उसमें हवन किया और पाया कि उस कमरे का ७७.५ प्रतिशत प्रदूषण कम हो गया। डॉ. फुन्दनलाल अग्निहोत्री एम.डी. ने अपनी पुस्तक 'यज्ञ चिकित्सा' में यह सिद्ध किया है कि अनेक साध्य और असाध्य रोगों की चिकित्सा यज्ञ से संभव है।

विदेशों में भी यज्ञ के विषय में अनुसन्धान हुए हैं और निरन्तर हो रहे हैं। रूस के वैज्ञानिक श्री शिरोविच ने एक पुस्तक में लिखा है कि गाय के घी को अग्नि में डालने से उससे उत्पन्न धुआँ परमाणु विकिरण के प्रभाव को बड़ी मात्रा में दूर कर देता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह प्रक्रिया यज्ञ के नाम से जानी जाती है। एम. मोनियर चिकित्साशास्त्री अपनी पुस्तक 'एन्शियण्ट हिस्ट्री ऑफ मेडिसन' में लिखते हैं कि विभिन्न रोगों के जीवाणुओं को समाप्त करने के लिए यज्ञ से सरल तथा सुलभ पद्धति अन्य कोई नहीं है। अमेरिका, चिली, पोलैण्ड, जर्मनी आदि देशों में हवन की लोकप्रियता बढ़ रही है। विश्व के अनेक देशों में रोगों को दूर करने के लिए, कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए तथा प्रदूषण को दूर करने के लिए यज्ञ-चिकित्सा (Homa Therapy) का प्रचलन बढ़ रहा है। अत: स्पष्ट है कि यज्ञ प्रदूषण का पर्याप्त सफल समाधान है।

तिलकनगर, रोहतक

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से २८ फरवरी २०१९ तक)

१. हंसा कंवर राठौड़, बघेरा, अजमेर २. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ३. मै. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ४. श्री श्याम बाबू व श्रीमती उषा आर्य, गाजियाबाद ५. श्री अशोक कुमार गुप्ता, दिल्ली ६. श्री अंकुर भार्गव, बैंगलोर ७. श्री ज्ञानेन्द्र सिंह व श्रीमती लज्जा, नई दिल्ली ८. भूगोल शिक्षक क्लब, नई दिल्ली ९. श्री अनन्तदेव, उदयपुर १०. श्री मदनगोपाल, दिल्ली ११. श्री सुजीत कुमार, देवरिया १२. श्री विनय कुमार झा, जयपुर १३. श्री अरुण सेन व असीम वाधवा, जयपुर १४. श्री प्रवीण कुमार आर्य, जोधपुर १५. श्री इन्द्रपाल सिंह, दिल्ली १६. श्री मुमुक्षु मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १७. श्री लक्ष्मण मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १८. श्रीमती निर्मला गुप्ता, अजमेर १९. श्री कमलेश, गुड़गाँव २०. श्री अनिल कुमार आर्य, बुलन्दशहर २१. श्री बालकिशन (बाबा), झज्जर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से २८ फरवरी २०१९ तक)

१. श्री माणिकचन्द जैन, अजमेर २. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ३. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ४. मै. गोपीलाल भँवरलाल, मेहसाना ५. श्रीमती प्रभा आर्य, नई दिल्ली ६. श्री सुदेश चढ्ढा, नई दिल्ली ७. श्री के.सी. सिंह, नई दिल्ली ८. श्रीमती सुनीता कौशिक, नई दिल्ली ९. श्री चाणक्य राजानी, नई दिल्ली १०. श्री मुकेश शर्मा, नई दिल्ली ११. श्री अनन्त देव, उदयपुर १२. श्री धमेन्द्र आर्य, रायबरेली १३. श्री अरुण सेन व श्री असीम वाधवा, जयपुर १४. श्री लक्ष्मण मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १५. श्रीमती सुमन माहेश्वरी, मुम्बई।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

आर्य मान्यताओं के पुनः संस्थापक
महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

कृष्णचन्द्र गर्ग

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन में अन्दर-बाहर सत्य और सात्विकता ओतप्रोत थी। वे हर प्रकार के आडम्बर से परे थे। लोकोपकार उनका एकमात्र लक्ष्य था। परमात्मा ने उन्हें बुद्धिबल और नैतिक बल गजब का दिया था। उन्होंने समाज की स्थिति का तथा पुस्तकों का अध्ययन खूब किया था। उनकी स्मरण-शक्ति कमाल की थी। व्याख्यान वे सरल और स्पष्ट भाषा में दिया करते थे। उनकी शैली मधुर और तर्कपूर्ण होती थी। उन्होंने सोई हुई हिन्दू जाति को जगाया। उसके खोए हुए गौरव को वापिस दिलाया। उसकी कायरता, अज्ञानता, भीरुता और अन्धविश्वास को धोया।

महर्षि दयानन्द ने डंके की चोट से ऐलान किया कि आर्य लोग जो आजकल हिन्दू कहलाते हैं भारतवर्ष के ही मूल निवासी हैं। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि आर्य भारत में कहीं बाहर से आए थे। आर्यों का संस्कृत भाषा में साहित्य ही संसार में सबसे पुराना साहित्य है। संस्कृत के किसी ग्रन्थ में नहीं लिखा कि आर्य भारतवर्ष में कहीं बाहर से आकर बसे थे। इस देश का सबसे पहला नाम आर्यावर्त्त था अर्थात आर्यों का देश। उससे पहले इसका कोई और नाम न था। इस प्रकार उन्होंने हिन्दुओं के मनोबलों को बढ़ाया।

स्वामी जी हिन्दुओं की सभी कमियों और कमजोरियों के लिए पुराणों को जिम्मेदार मानते थे। वे पुराणों को महर्षि वेद व्यास जी की रचना न मानते थे। वे लिखते हैं ''जो अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यास जी होते तो उनमें इतने गपोड़े न होते क्योंकि शारीरिक सूत्र, योगदर्शन के भाष्य आदि व्यास जी कृत ग्रन्थों को देखने से पता लगता है कि वे बड़े विद्वान, सत्यवादी, धार्मिक, योगी थे। वे ऐसी झूठी बातें कभी न लिखते जैसी पुराणों में हैं।''

स्वामी जी मूर्तिपूजा को भारत के सारे अनिष्टों का मूल मानते थे। पुराणों ने ही मूर्तिपूजा को प्रोत्साहित किया और आर्यत्व की कब्र खोद दी। अवतारवाद, जन्म पर आधारित जाति-प्रथा, सती-प्रथा, विधवा-विवाह का निषेध आदि, अनेक ऐसी कुरीतियां जिनके कारण हिन्दू बदनाम हैं, सबको पुराणों में मान्यता प्राप्त है। पुराणों की ऐसी मान्यताएं वेद-विरुद्ध हैं। यदि पुराण और पौराणिक विचार हिन्दुओं में न होते तो ईसाइयों और मुसलमानों को हिन्दुओं के विरोध में कहने को कुछ भी न मिल पाता और न ही इतनी आसानी से हिन्दू, मुसलमान और ईसाई बनते।

महर्षि दयानन्द सत्य के प्रबल पक्षधर थे। आर्य समाज के दस नियमों में चौथा नियम उन्होंने दिया - सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। वे मानते थे कि यद्यपि मनुष्य का आत्मा सत्य-असत्य का जाननेहारा है। तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य पर झुक जाता है। उन्होंने 'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश' में उपनिषद् का निम्न श्लोक उद्धृत किया है-

न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्।
न हि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं समाचरेत्॥

अर्थात सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है, झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं है और सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं है। इसलिए सत्य का आचरण करें।

महर्षि दयानन्द दिखावे के बाहरी चिह्नों को धर्म से न जोड़ते थे। वे जब किसी को रुद्राक्ष पहने देखते थे तो उससे कहा करते थे कि इन गुठलियों के पहनने से क्या लाभ है। इससे मुक्ति नहीं होती। मुक्ति तो ज्ञान से होती है। मनुस्मृति में भी कहा गया है- **'न लिंगम् धर्म कारणं'** अर्थात बाहरी चिह्नों से व्यक्ति धार्मिक नहीं बनता। धार्मिक तो शुभ आचरण से बनता है। महर्षि मनु ने कहा है- **आचारः परमो धर्मः**।

महर्षि दयानन्द मानते थे कि हमारा नाम आर्य है, हिन्दू नहीं। आर्य का अर्थ है श्रेष्ठ पुरुष। अरब के लोग काफिर और दुष्ट को हिन्दू कहते हैं। विदेशी मुसलमानों ने हमें हिन्दू नाम दिया है।

स्वामी जी श्री कृष्ण जी को एक महापुरुष मानते थे। सत्यार्थप्रकाश में वे लिखते हैं ''देखो! श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अति उत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र धर्मात्माओं के समान है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण, श्री कृष्ण जी ने जन्म से मृत्यु तक बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाए हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी, कुब्जा दासी से सम्भोग, परस्त्रियों से रासमण्डल, क्रीड़ा आदि झूठे दोष श्री कृष्ण जी में लगाए हैं। इसको पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मत वाले श्री कृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी जैसे महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती।''

महर्षि दयानन्द ने राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया, विशुद्ध भारतीयता पर बल दिया। सत्य-असत्य विवेक की प्रवृत्ति को जगाया, बुद्धिवाद को बढ़ावा दिया, अन्धविश्वास और रूढ़िवाद का खण्डन किया।

स्वामी जी का दरबार मित्र, शत्रु सबके लिए खुला था। वे सबके साथ प्रेम से बर्ताव करते थे। परन्तु यदि कोई उनके साथ दुष्टता का व्यवहार करने लगता तो वे रुद्ररूप धारण करके उसे दण्ड देने को तैयार हो जाते थे।

सन १८७३ में कलकत्ता में स्वामी जी अपने व्याख्यानों में कहा करते थे कि जब तक वेद न पढ़ाये जायें, संस्कृत की शिक्षा से कोई लाभ नहीं। पुराणों की बुरी शिक्षा से लोग व्यभिचारी हो जाते हैं और जो विचारशील हैं वे धर्म से पतित होकर हानिकारक बन जाते हैं।

स्वामी जी कहते थे कि पत्थरों को पूजने से लोगों की बुद्धि पत्थर हो गई है। इस कारण से वे सत्य-सिद्धान्तों को समझने में असमर्थ हैं। मैं उनकी जड़पूजा छुड़वाकर उनकी बुद्धि को निर्मल करने का प्रयत्न कर रहा हूँ। वह यह भी कहते थे-''मेरा काम लोगों के मन-मन्दिरों से मूर्तियां निकलवाना है, ईंट-पत्थर के मन्दिरों को तोड़ना-फोड़ना नहीं है।''

सन १८७४ में मुम्बई में अनेक अंग्रेज कर्मचारी स्वामी जी से मिलने और उनके व्याख्यान सुनने आया करते थे और उनकी प्रशंसा करते थे।

सन १८७८ में अजमेर में रायबहादुर श्यामसुन्दरलाल ने स्वामी जी से कहा कि आप मूर्तिपूजा पर इतना तीव्र आक्रमण क्यों करते हैं, उसे थोड़ा नम्र कर देने से भी तो काम चल सकता है। स्वामी जी ने उत्तर दिया - मूर्तिपूजा पर मृदु आक्रमण करने व उससे किसी प्रकार की सन्धि करने से हमारे सिद्धान्तों की भी वही दशा होगी जो अन्य सिद्धान्तों की हुई है और कुछ समय के बाद आर्यसमाज पौराणिक होकर हिन्दुओं में मिल जाएगा।

सन १८७९ में दानापुर में एक दिन एक सज्जन ने स्वामी जी से कहा कि आप इस्लाम के विरुद्ध न कहा करें। उस समय तो स्वामी जी ने कोई उत्तर न दिया। परन्तु सायंकाल को जो व्याख्यान दिया वह आदि से अन्त तक इस्लाम के सिद्धान्तों पर ही था जिसमें इस्लाम की तीव्र समालोचना की। व्याख्यान का आरम्भ ही इन शब्दों से किया कि मुझे कहा गया है कि मुसलमानी मत का खण्डन मत करो, परन्तु मैं सत्य को छिपा नहीं सकता। जब मुसलमानों की चलती थी तब वे हम लोगों का तलवार से खण्डन करते थे। अब यह अन्धेर देखो कि मुझे उनका जिह्वा मात्र से खण्डन करने से मना करते हैं। मैं राज्य पाकर भला किसी की पोल खोलने से कभी रुक सकता हूँ।

एक दिन पण्ड्या मोहनलाल ने स्वामी जी से प्रश्न किया कि भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति कब होगी। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाए बिना ऐसा होना मुश्किल है।

वेदों के सम्बन्ध में महर्षि लिखते हैं, ''मैं वेदों में कोई बात युक्ति-विरुद्ध वा दोष की नहीं देखता और उन्हीं पर मेरा मत है।'' महर्षि का यह मत सभी ऋषि-मुनियों के मत के अनुकूल ही है। वैशेषिक दर्शन में महर्षि कणाद लिखते हैं - **बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे।** अर्थात वेद का प्रत्येक वाक्य समझदारी से बना है। महर्षि मनु कहते हैं- **यस्तर्केणानुसन्धते तं धर्मं वेद नेतरः।** अर्थात जो युक्ति से सिद्ध हो वही वेद का धर्म है, और कोई नहीं।

महर्षि दयानन्द वेदों को ईश्वर कृत तथा सब सत्य विद्याओं का पुस्तक मानते थे। वे वेद पढ़ने का अधिकार

स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबका मानते थे और वे मानते थे कि वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

महर्षि दयानन्द का स्वाध्याय बहुत विस्तृत था। ''भ्रान्ति निवारण'' पुस्तक में पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न को उत्तर देते हुए वे लिखते हैं- ''मैं अपने निश्चय और परीक्षा के अनुसार **ऋग्वेद** से लेके **पूर्वमीमांसा** पर्यन्त अनुमान से तीन हजार ग्रन्थों के लगभग मानता हूँ।''

सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में प्रसिद्ध देशभक्त **लाला हरदयाल एम.ए.** के विचार- ''इस महान ग्रन्थ के अध्ययन से मेरी विचारधारा बदल गई है। सोई हुई जाति के स्वाभिमान को जागृत करने वाला यह ग्रन्थ अद्वितीय है।''

वीर सावरकर की सत्यार्थप्रकाश पर टिप्पणी- ''हिन्दू जाति की ठण्डी रगों में गर्म खून का संचार करने वाला यह ग्रन्थ अमर रहे। सत्यार्थप्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मज़हब की शेखी नहीं मार सकता।''

प्रसिद्ध कवि **सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला** ने कहा था- हमारा सबसे अधिक उपकार महर्षि दयानन्द ने किया है।

महान् कहानीकार उपन्यास सम्राट मुन्शी प्रेमचन्द की एक कहानी है 'आपका चित्र'। कहानी के नायक ने अपने कमरे में स्वामी दयानन्द का एक चित्र लटका रखा है। वह बता रहा है कि यह चित्र उसने क्यों लटका रखा है। ''मैं उसे केवल इस कारण से अपने कमरे में लटकाए हुए हूँ कि स्वामी जी के जीवन का उच्च और पवित्र आचरण सदा मेरी आँखों के सामने रहे। जिस घड़ी सांसारिक लोगों के व्यवहार से मेरा मन उब जाए, जिस समय प्रलोभनों के कारण पग डगमगाएं अथवा प्रतिशोध की भावना मेरे मन में लहरें लेने लगे अथवा जीवन की कठिन राहें मेरे साहस व शौर्य की अग्नि को मन्द करने लगें, उस विकट बेला में उस पवित्र मोहिनी मूर्त के दर्शनों से आकुल व्याकुल हृदय को शान्ति हो, दृढ़ता धीरज बने रहें, क्षमा व सहनशीलता के मार्ग पर पग चलते चलें तथा मैं अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि इस चित्र से मुझे लाभ पहुँचा है और एक बार नहीं, कई बार।

८३१ सैक्टर १०, पंचकूला, हरियाणा।

आर्यजगत् के समाचार

१. आर्यजगत् के लिये शुभ समाचार- सभा प्रधान डॉ. वेदपाल जी सम्मानित- उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान की ओर से वैदिक वाङ्मय के विशिष्ट विद्वानों को प्रतिवर्ष पुरस्कृत किया जाता है। आर्यजगत के लिए यह अत्यन्त गौरव का विषय है कि आर्यजगत के उच्च कोटि के विद्वान् व लेखक, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जिज्ञासुओं का शंका समाधान करने वाले, परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल जी को इस वर्ष उक्त संस्थान की ओर से १,०१,००० (एक लाख एक हजार) रुपये की राशि से सम्मानित किया जाएगा। इस अवसर पर परोपकारी पत्रिका एवं सभी आर्यजनों की ओर से डॉ. वेदपाल जी को हार्दिक शुभकामनाएँ। आपका जीवन इसी प्रकार वेद एवं संस्कृत की सेवा में लगा रहे एतदर्थ परोपकारिणी सभा प्रभु से आपके स्वस्थ, दीर्घ जीवन की कामना करती है।

२. प्रवेश सूचना- गुरु विरजानन्द गुरुकुल महाविद्यालय, करतारपुर (सम्बद्ध गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार) सत्र २०१९-२० में कक्षा ६ से ११ और बी. प्रथम वर्ष में प्रवेश दिया जा रहा है। प्रवेश परीक्षा ७ अप्रैल २०१९ को प्रातः १० बजे होगी। महाविद्यालय में आधुनिक विषयों के साथ-साथ संस्कृत को मुख्य विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। सम्पूर्ण निःशुल्क शिक्षा (आवास, पाठन, भोजन), संस्कृतमय वातावरण, अंग्रेजी एवं कम्प्यूटर को पढ़ाने की विशेष सुविधा, समय-समय पर आर्य विद्वानों के विशिष्ट व्याख्यान, मल्टीमीडिया एवं पुस्तकालय की सुविधा। सम्पर्क सूत्र- ०१८१-२७८२२५२, ९८०३०४३२७१

ई-मेल- gurukulkartarpur@gmail.com

वेबसाइट- gurukulkartarpur.com

३. आर्य महासम्मेलन- आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल द्वारा १३वाँ आर्य महासम्मेलन खड़गपुर, पश्चिम बंगाल में १६ एवं १७ मार्च २०१९ को गीतांजली रेलवे भवन में (गिरि मैदान रेलवे स्टेशन के पास) मनाया जायेगा। सम्मेलन के मुख्य आकर्षण महायज्ञ ११०० यज्ञ कुण्ड, आसन

प्रतियोगिता, सत्यार्थप्रकाश पर आधारित प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता, गुरुकुल विद्यार्थियों की मन्त्र-श्लोक की प्रतियोगिता, यज्ञ, भजन, प्रवचन आदि होंगे।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- स्वामी विवेकानंद सरस्वती द्वारा संचालित गुरुकुल नवप्रभात आश्रम नुँआपाली, बरगड़, ओडिशा का १७वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक १८ व १९ फरवरी २०१९ को हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर यजुर्वेद पारायण तथा १०१ कुण्डीय महायज्ञ स्वामी विवेकानंद सरस्वती के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। इसे सफल बनाने के लिए आर्यजगत के उच्चकोटि के संन्यासी, विद्वान् व आर्यजन पधारे हुए थे। समाज निर्माण सम्मेलन, योग सम्मेलन, वैदिक शिक्षा सम्मेलन, जैविक कृषि-गोसंवर्धन सम्मेलन के साथ-साथ कन्या गुरुकुल की यज्ञशाला व भोजनालय का शिलान्यास पूज्य स्वामी विवेकानंद, वानप्रस्थी श्री ओममुनि (वरिष्ठ उपप्रधान परोपकारिणी सभा, अजमेर), श्री राजेश सेठी, श्री चौथमल जांगिड़ राजस्थान, श्री दयानंद शर्मा, श्रीमती सीता दवे व अन्य आर्यजनों के करकमलों से हुआ। गुरुकुल के अध्यक्ष श्री भगवानदेव, कन्यागुरुकुल की आचार्या डॉ. अहल्या नायक व गुरुकुल के आचार्य श्री बृहस्पति ने सभी का आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम डॉ. सोमदेव 'शतांशु' के मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ।

५. महिला श्रमिकों को साड़ियां बाँटीं- आर्यसमाज कोटा, राज. द्वारा अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर दिहाड़ी श्रमिक महिलाओं को केशवपुरा स्थित दिहाड़ी श्रमिक स्थल पर साड़ियाँ बाँटीं गईं तथा महिला सशक्तिकरण एवं महिला अधिकारों की जानकारी दी गई। इस अवसर पर राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व उपप्रधान अर्जुन देव चड्ढा ने कहा कि आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने महिलाओं को समानता का अधिकार दिलाया। डीएवी स्कूल कोटा की प्राचार्या श्रीमती सरिता रंजन गौतम ने महिलाओं को संबोधित करते हुए कहा कि वे जीवन में शिक्षा के महत्व को समझें और अपने परिवार को शिक्षित करें साथ ही स्वयं भी शिक्षित एवं साक्षर बनने के लिए कुछ कार्य अवश्य करें। डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता ने महिलाओं को गुटखा-तंबाकू आदि का नशा नहीं करने को कहा तथा नशे से होने वाली कैंसर जैसी घातक बीमारी के बारे में उन्हें जानकारी दी।

६. बोधोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज हिरणमगरी, उदयपुर की ओर से ५ मार्च २०१९ को शिवरात्रि पर्व बोधोत्सव के रूप में मनाया गया। पं. रामदयाल के पौरोहित्य में यज्ञ सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम में डॉ. अशोक आर्य ने प्रवचन एवं श्री कृष्ण कुमार सोनी ने भजनों के माध्यम से महर्षि दयानन्द के जीवन पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन श्री भूपेन्द्र शर्मा ने किया। मंत्री श्री संजय शांडिल्य द्वारा धन्यवाद के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

७. कंठस्थीकरण प्रतियोगिता- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय आबूपर्वत में शास्त्री द्वितीय वर्ष में अध्ययनरत ब्र. श्रवण आर्य ने टंकारा में ऋषि बोधोत्सव पर आयोजित योगदर्शन सम्पूर्ण व यजुर्वेद ४० वां अध्याय (अर्थ सहित) कंठस्थीकरण प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर ५१०० रु. पुरस्कार राशि प्राप्त की। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

८. बोधोत्सव मनाया- आर्यसमाज मगरा पूँजला, जोधपुर, राज. में ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर श्री राजेन्द्र प्रसाद वैष्णव के ब्रह्मत्व में यज्ञ किया गया। मुख्य वक्ता आचार्य विमल शास्त्री रहे। प्रधान श्री सम्पतराज देवड़ा ने आभार व्यक्त किया।

९. आर्य साहित्य का प्रचार- मालदा टाउन में आयोजित पुस्तक मेला दि. १६ से २३ जनवरी २०१९ बड़ा शिव मंदिर में आर्यसमाज कलकत्ता, आर्यसमाज बड़ा बाजार, आर्यसमाज आसनसोल, आर्यसमाज हावड़ा के सहयोग से पहली बार आर्यसमाज का स्टॉल लगाया गया। मेले में सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, ये तीनों पुस्तकें पहले दिन ही समाप्त हो गईं।

१०. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज शृंगार नगर, लखनऊ का वार्षिकोत्सव ३ फरवरी २०१९ को सोल्लास मनाया गया। इस अवसर पर डॉ. वागीश आचार्य के प्रवचन हुए। पं. गिरजेश कुमार ने यज्ञ कराया तथा राधेमोहन शर्मा ने भजन प्रस्तुत किये। आचार्य रूपचन्द्र दीपक ने मंच संचालन किया।

११. वार्षिक उत्सव मनाया- गुरुकुल हरिपुर, जुनानी, जि. नुआपाड़ा, ओडिशा का त्रिदिवसीय नवम वार्षिक

महोत्सव २६ से २८ जनवरी २०१९ को गुरुकुल के संचालक डॉ. सुदर्शन देव आचार्य के सान्निध्य में गुरुकुल के आचार्य, उपाचार्य एवं कर्मठ कार्यकर्ताओं के पुरुषार्थ से निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। महोत्सवीय अवसर पर लगभग सौ साधु-सन्तों का शॉल एवं नगद राशि से सम्मान, विधवा, दिव्यांग, अनाथों को साड़ी, शॉल एवं कम्बल वितरण, छः आदर्श गृहस्थी वानप्रस्थ दीक्षा से दीक्षित एवं पचास के लगभग श्रद्धालु महानुभाव ने यज्ञोपवीत धारण किये। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के द्वारा बौद्धिक एवं शारीरिक प्रतिभा का प्रदर्शन किया गया। जिसमें १९ ब्रह्मचारियों ने अष्टाध्यायी, धातुपाठ, लिंगानुशासन, उणादिकोष, पारिभाषिक, गणपाठ, निघण्टु, मीमांसा अतिरिक्त पाँच दर्शन, छन्दः शास्त्र, काव्यालंकार, वर्णोच्चारण शिक्षा, आर्योद्देश्यरत्नमाला, ईशोपनिषद्, पुरुष सूक्त आदि ऋषिकृत ग्रन्थ आद्योपान्त सुनाये तथा नाटिका, गीतिका, नाट्य गीतिका एवं विविध शिक्षाप्रद सांस्कृतिक कार्यक्रम ब्रह्मचारियों के द्वारा प्रदर्शित किये गये।

१२. वार्षिकोत्सव- आर्ष कन्या गुरुकुल भुसावर, भरतपुर, राज. का वार्षिकोत्सव आगामी ३० व ३१ मार्च २०१९ को आयोजित किया जा रहा है। इस अवसर पर आचार्य शिवकुमार शास्त्री के ब्रह्मत्व में चतुर्वेद शतकम् महायज्ञ का आयोजन किया गया है। वार्षिकोत्सव में अनेक प्रख्यात विद्वान्, संन्यासी, सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक एवं आर्य नेता पधार रहे हैं। सभी आर्यजन सपरिवार आमन्त्रित हैं। सम्पर्क- ९६९४८९२७३५

वैवाहिक विज्ञापन

१३. वर चाहिये- आर्य परिवार, एम.ए. तथा कम्प्यूटर में डिप्लोमा, २७ वर्षीया विधवा के ५ वर्षीया पुत्री, गौरवर्ण, लम्बाई ५ फुट २ इंच कन्या हेतु समकक्ष शिक्षा प्राप्त वर चाहिये। **सम्पर्क सूत्र**- वीरेन्द्र आर्य- मो. ९२१९८५२१४१

शोक समाचार

१४. गुजरात प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री एवं टंकारा ट्रस्ट के ट्रस्टी हँसमुख परमार के पिताजी **श्री धरमशीभाई परमार** का दिनांक १८ फरवरी २०१९ को ९५ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। उनका अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक विधि से किया गया। परोपकारी परिवार की दिवंगत आत्मा को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

१५. आर्यसमाज गाँधीनगर, नई दिल्ली से जुड़े रहे, निष्ठावान् आर्यसमाजी (श्री जितेन्द्र भाटिया, आर्यवीर दल, दिल्ली के पिता) **श्री सत्यपाल भाटिया** का गत १४ फरवरी को निधन हो गया। आपका अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से किया गया। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

चुनाव समाचार

१६. आर्यसमाज खेड़ा अफ़गान, जनपद सहारनपुर के चुनाव में **प्रधान**- श्री राजेश आर्य, **मन्त्री**- श्री अमित कुमार आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री शशिकान्त गुप्ता को चुना गया।

ईश्वर अवतार नहीं लेता

जो ईश्वर अवतार शरीर धारण किये बिना जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करता है उसके सामने कंस, रावणादि राक्षस एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक होने से उन कंस, रावणादि राक्षसों के शरीर में भी परिपूर्ण हो रहा है, जब चाहे उसी समय मर्मच्छेदन कर नाश कर सकता है।

भक्तजनों के उद्धार करने के लिए भी वह अवतार नहीं लेता क्योंकि जो भक्तजन ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है। पृथिवी, सूर्यादि, जगत् की उत्पत्ति, धारण और प्रलय जो ईश्वर के बड़े कर्म हैं उनके सामने रावणादि का वध एक साधारण एवं नगण्य कर्म है।

परमात्मा के अनन्त सर्वव्यापक होने से उसका आना जाना कभी सिद्ध नहीं हो सकता। जाना वा आना वहाँ हो सकता है जहाँ न हो। क्या परमेश्वर वह गर्भ में व्यापक नहीं था जो कहीं से आया? और बाहर नहीं था जो भीतर से निकला? इसलिए परमेश्वर का आना-जाना, जन्म-मरण कभी सिद्ध नहीं हो सकता। राग, द्वेष, क्षुधा, तृषा, भय, शोक, दुःख, सुख, जन्म, मरण आदि गुण मनुष्य के हैं, ईश्वर के नहीं। (स.प्र.स. ७)

परोपकारिणी सभा के स्थापना दिवस पर प्राप्त बधाई सन्देश

आदरणीय

सादर नमस्ते! यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि महर्षि देव दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा का १३७वाँ स्थापना दिवस अत्यन्त उल्लास और उत्साह के साथ दिनांक २७ फरवरी २०१९ को अजमेर में मनाया जा रहा है। इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर उपस्थित रहने की हार्दिक इच्छा होते हुए भी कुछ आवश्यक कारणोंवश अजमेर पहुँचना सम्भव नहीं हो पा रहा है जिसके लिये करबद्ध क्षमाप्रार्थी हूँ।

मैं सर्वप्रथम उन समस्त दिवंगत महान् विभूतियों को स्मरण करते हुए उन्हें श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ जिन्होंने सन् १८८३ से लेकर अब तक परोपकारिणी सभा के विभिन्न पदों को सुशोभित करते हुए, सभा के उद्देश्यों को पूर्ण करने में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंहजी से लेकर डॉ. धर्मवीर तक का कालखण्ड परोपकारिणी सभा के इतिहास में सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। देश-देशान्तरों में वेद और वेदांग आदि शास्त्रों के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से तथा वैदिक धर्म के उपदेशकों की दृष्टि से यह कालखण्ड अब तक का सर्वाधिक ऐतिहासिक कालखण्ड रहा है। इस कालखण्ड की समस्त गतिविधियों ने तथा 'परोपकारी पत्रिका' में प्रकाशित सम्पादकीय लेखों ने सम्पूर्ण आर्यजगत् को अत्यधिक प्रेरित और प्रोत्साहित किया है।

आज न केवल हमारा देश बल्कि सम्पूर्ण विश्व जिन विषम और विकट परिस्थितियों से गुजर रहा है उन्हें देखकर ऐसा लगता है कि ऋषि दयानन्द के सपनों वाले 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' से अभी हम बहुत दूर खड़े हैं। यह अकाट्य सत्य है कि केवल वैदिक संस्कृति के द्वारा तथा वैदिक विचारधारा के द्वारा ही मानव मात्र का कल्याण सम्भव है। केवल इसी मार्ग पर चलकर संसार में सुख और शान्ति की स्थापना सम्भव हो सकती है।

परोपकारिणी सभा के १३७ वें स्थापना दिवस पर आयोजित कार्यक्रम की सर्वाधिक फलश्रुति इस तथ्य में निहित है कि हम आपसी मतभेदों को भुलाकर, कन्धे से कन्धा मिलाकर ऋषि दयानन्द के अधूरे कार्यों को पूरा करने का संकल्प लेकर, उस ओर चल पड़ें ताकि आर्यसमाज के स्वर्णिम अतीत की तरह फिर से एक नई क्रान्ति के द्वारा राष्ट्र के नवनिर्माण में और विश्व शान्ति की स्थापना में आशातीत सफलता प्राप्त हो सके। सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान होने के नाते मैं स्वयं सर्वप्रथम इस अभियान में जुड़ने का संकल्प लेता हूँ और देश की सभी अग्रणी आर्य संस्थाओं से आग्रह करता हूँ कि पूरी शक्ति के साथ एक होकर ऋषि के सपनों को पूरा करने में जुट जायें।

मैं इस अवसर पर उपस्थित सभी सम्माननीय अतिथियों को, ओजस्वी वक्ताओं को तथा सभा के सभी गणमान्य पदाधिकारियों को अपना हार्दिक अभिनन्दन प्रेषित कर रहा हूँ। परोपकारिणी सभा के उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओं के साथ-

भवदीय
सुरेशचन्द्र आर्य
प्रधान, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, दिल्ली

ईश्वर पाप क्षमा नहीं करता

ईश्वर पाप क्षमा नहीं करता। क्योंकि जो पाप क्षमा करे तो उसका न्याय नष्ट हो जाये और सब मनुष्य महापापी हो जायें, क्योंकि क्षमा की बात सुन ही के उनको पाप करने में निर्भयता और उत्साह हो जाये। और जो अपराध नहीं करते वे भी अपराध करने से न डर कर पाप करने में प्रवृत्त हो जायेंगे, इसलिए सब कर्मोंका फल यथावत् देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं। (स.प्र.स.७)

१३६ वर्ष बाद...

अंकित 'प्रभाकर'

ऋषि जोधपुर जाते समय कह गये थे कि यदि मेरी अंगुलियों को बत्ती बनाकर जला दिया जाये तो भी मुझे यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मेरे शरीर के अंग संसार को प्रकाशित करने के काम आ रहे हैं। आर्यसमाज का स्वर्णिम इतिहास ऋषि की इस इच्छा का क्रियात्मक रूप ही तो है। दीपावली के वे दीप जो ३० अक्टूबर सन् १८८३ को जले थे, ऋषि की जलती हुयी अंगुलियां न थीं तो और क्या था? समय बीता है पर प्रकाश अब भी मन्द न पड़ा। ऋषि की मृत्यु मृत्यु न थी अमरता का नया अध्याय थी। ऋषि का जाना जाना न था बल्कि किसी युग के आगमन की सूचना थी। ऋषि की अन्तिम दृष्टि भी नई सृष्टि कर चुकी थी। ऋषि ने अपने समस्त अधिकार अपनी उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा को सौंप दिये थे। अब ऋषि न थे बल्कि मैदान में उनकी उत्तराधिकारिणी थी।

परोपकारिणी सभा ने अपने १३७ वें स्थापना दिवस पर अतीत का सिंहावलोकन किया और अग्रिम मार्ग के लिये प्रेरणा ली। २७ फरवरी २०१९ को ऋषि उद्यान अजमेर में सम्पन्न इस कार्यक्रम का मुख्य ध्येय सभा के बृहद् उद्देश्यों का स्मरण कर उनकी पूर्ति हेतु स्वयं को सन्नद्ध करना था। इस अवसर पर परोपकारी पत्रिका को सन्देशवाहक बनाया गया, आर्यजनों तक गौरवमयी इतिहास पहुँचाने में। मार्च प्रथम २०१९ का परोपकारी अंक स्थापना दिवस विशेषांक था, जिसमें २७ फरवरी १८८३ से २७ फरवरी २०१९ तक का गौरवशाली इतिहास संक्षेप में संजोया गया। यह अंक संग्रहणीय है।

१३६ वर्ष पहले जब यह सभा स्थापित हुई उस समय महर्षि द्वारा चयनित सभा के २३ सदस्यों में शाहपुरा नरेश नाहर सिंह वर्मा भी थे, जो महर्षि के परमभक्त थे, उन्हीं के वंशज शाहपुराधीश श्री सुदर्शन देव जी के दौहित्र श्री शत्रुजित् जी ने इस अवसर पर पधारकर कार्यक्रम को और भी अधिक गरिमामय व ऐतिहासिक रूप प्रदान किया।

परोपकारिणी सभा में अर्धशताब्दी से भी अधिक समय तक जिस परिवार ने अपनी सक्रिय सेवायें प्रदान कीं, उस शारदा परिवार से श्री श्रीकरण शारदा के ज्येष्ठ व कनिष्ठ पुत्र श्री हेमन्त शारदा एवं श्री मनोज शारदा भी इस कार्यक्रम में भागीदार रहे।

सभा के अनन्य सहयोगी रहे श्री धर्मसिंह कोठारी जी के योग्य सुपुत्र राजस्थान के लोकायुक्त श्री सज्जनसिंह कोठारी ने मुख्य अतिथि के पद को अलंकृत कर अपना आशीर्वाद प्रदान किया। अन्त में सभा प्रधान डॉ. वेदपाल जी के प्रेरक उद्बोधन एवं सभामन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य द्वारा धन्यवाद ज्ञापित किया गया। साथ ही आर्यसमाज की विचारधारा में रचे-बसे दैनिक भास्कर समाचार-पत्र समूह के प्रबन्ध सम्पादक श्री जगदीश शर्मा ने विशिष्ट अतिथि के रूप में अपना प्रेरक उद्बोधन प्रदान किया।

पूरे कार्यक्रम का कुशल संयोजन सभासद् डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी' ने अपनी वैदुष्यपूर्ण दक्षता के साथ किया। सभा से सम्बन्धित ऐतिहासिक उद्धरणों से उन्होंने कार्यक्रम को चार चाँद लगा दिये। सभा उपप्रधान श्री ओम्मुनि जी ने कार्यक्रम की सज्जा में एवं आयोजन में भी सक्रिय भागीदारी बनाये रखी। इस प्रकार यह आयोजन-व्यवस्था पूर्ण रीति से सफलता को प्राप्त हुआ। परोपकारिणी सभा के इस उपक्रम में स्थानीय आर्यजनों की उत्साहजनक उपस्थिति इस उद्योग की सफलता का मुख्य अंग है।

सभा महर्षि की उत्तराधिकारी है, अतः महर्षि के प्रत्येक अनुयायी के लिये यह अनिवार्य हो जाता है कि वह सभा की उन्नति से स्वयं को सम्बद्ध रखे और इस कार्य का उपस्थित आर्यों ने भलीभाँति निर्वहन किया। हम सबकी ईश्वर से यह प्रार्थना है कि वह ऋषि के सर्वहितकारी उद्देश्यों की पूर्ति में सभा को सहाय्य प्रदान करें।

इस आयोजन की सम्पूर्ण सज्जा में परोपकारिणी सभा के सभी कार्यकत्ताओं विशेष रूप से श्री योगेन्द्र मेधावी, श्री सुरेन्द्रसिंह एवं श्री हिम्मत सिंह विशेष धन्यवाद के पात्र हैं और इन सबको दिशा-निर्देश प्रदान करने वाली, सम्पूर्ण आयोजन का प्रबन्ध करने वाली माता ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' के धन्यवाद के लिये शब्द नहीं हैं। **ऋषि उद्यान, अजमेर।**